"हमारे अंदर अज्ञान से जमे हिमखंड को तोड़ने के लिए पुस्तक एक कुठार है।" -काफ्का

समीक्षा,संवाद और सूचनाओं की

साहित्य नंदिनी

वर्ष–7, अंक–2, फरवरी 2025 www.abhinavimroz.com RNI No. DELHIN/2017/74713/19-02-18

रेनू यादव का नवीनतम भोजपुरी कहानी-संग्रह

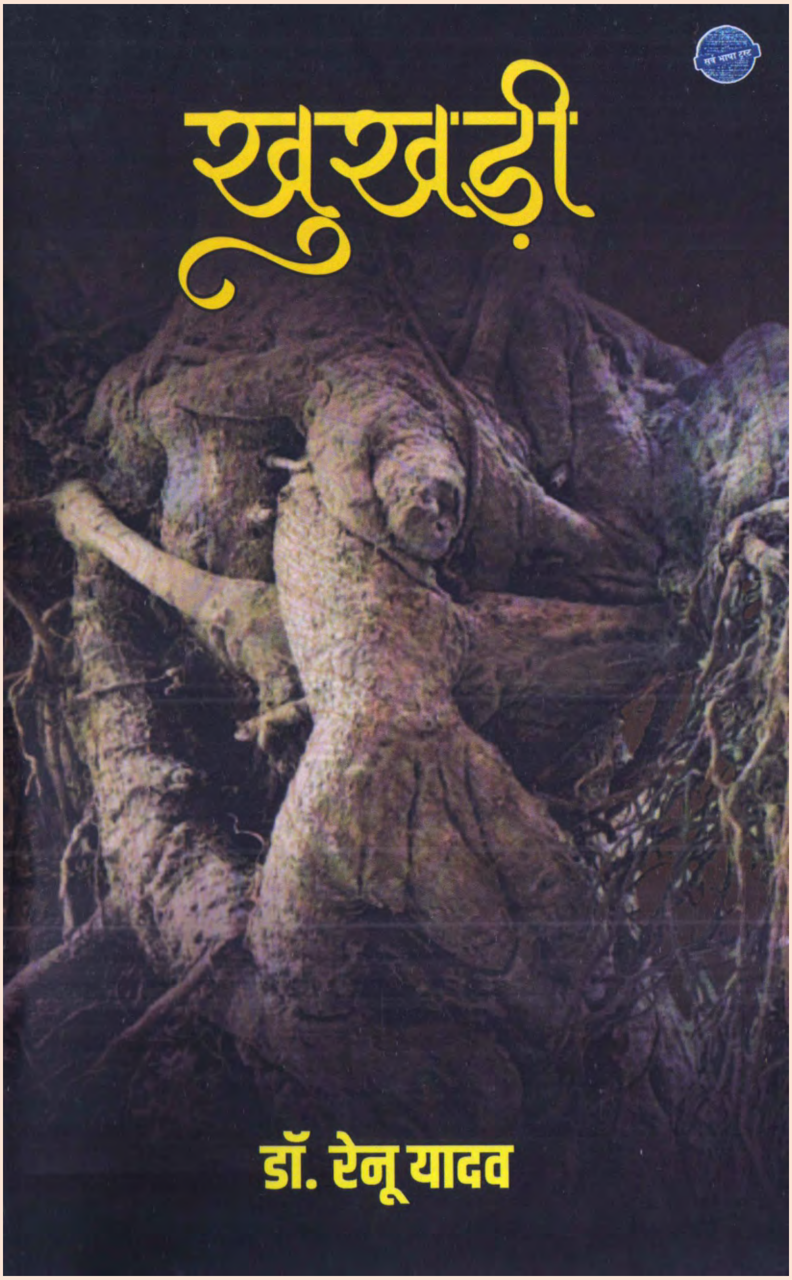

प्रो. बंदना पाण्डेय के साथ

इफको से श्रीलाल शुक्ल स्मृति इफको युवा साहित्य सम्मान 2024 से सम्मानित।

समर्पण

अपने मातृभाषा भोजपुरी के,
जेकरे गोदी में बइठ के बोलले क
अउरी जीवन जियले के संस्कार पउले बानी

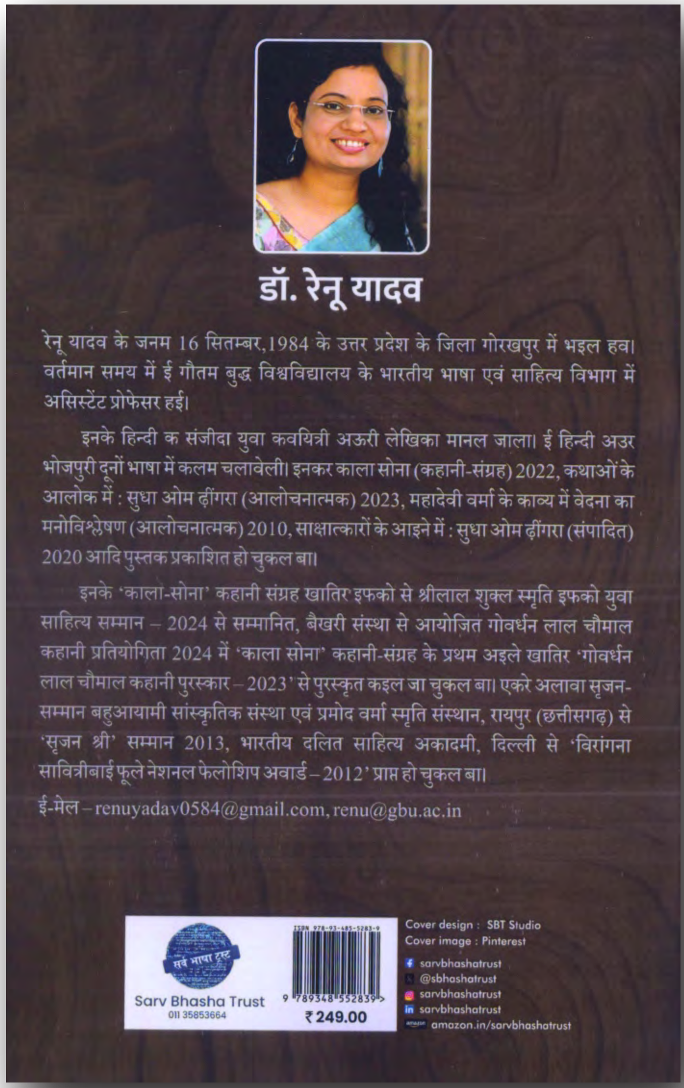

सर्व भाषा ट्रस्ट
J-49, Street No.-38, Rajapuri, Main Road
Uttam Nagar, New Delhi -110059
E-mail : sbtpublication@gmail.com
Website : www.sarvbhasha.in
☎ 011 35853664

खुखड़ी
डॉ. रेनू यादव
ISBN : 978-93-48552-83-9
प्रथम संस्करण : 2024

© डॉ. रेनू यादव

मूल्य : ₹ 249.00

मुद्रक: आर. के. ऑफसेट प्रोसेस, दिल्ली

KHUKHARI
By Dr. Renu Yadav

समीक्षा

साहित्य की प्रासंगिकता...

अजित कुमार राय

कई मनीषियों को ऐसा लगता है कि अब साहित्य का समाज पर कोई प्रभाव नहीं रह गया है। और लेखक समाज में हाशिये पर चला गया है। सच तो यह है कि पुस्तक या किसी व्यक्ति का क्षणिक संसर्ग भी हमारे ऊपर कुछ न कुछ असर या संस्कार छोड़ जाता है, बशर्ते हम उनके सम्पर्क में आएँ। ऊर्ध्वगामी आरोहण कठिन होता है और अधोगति सरल। इसलिए चेतना का मूल्य-संस्कार विरल होता है। दूसरे लेखक का चारित्रिक कद आज बौना हो गया है। तथा समाज में उसका सम्मान घटा है। लेखन भी आज एक कैरियर हो गया है, मिशन नहीं, प्रोफेशन बन गया है। प्रायोजित आलोचना, प्रायोजित अभिनन्दन, शिविरबन्दी, प्रशस्ति-विनिमय और अपनी आलोचना के प्रति असहिष्णुता आज लेखन की दुनिया के विद्रूप हैं। हम समाज और राजनीति पर व्यंग्य तो मनोयोग से करते हैं, लेकिन अपने ऊपर कभी नहीं हँसते। सभ्यता-समीक्षा तो करते हैं, किन्तु आत्मालोचना का संस्कार विकसित नहीं करते। जबकि आत्म-वीक्षण अनिवार्य है, तभी हम जगत का सत्य देख सकते हैं। प्रभाव शब्द का नहीं, उस निःशब्द के चरित्र का होता है, जहाँ से शब्द निकलते हैं। इसलिए सर्जनात्मक आचरण की दीक्षा अनिवार्य है। आज साहित्य से सहित का भाव निकल गया है और एक लेखक का बयना दूसरे के घर नहीं जाता। जब कवि के भीतर ही उदारता अनुपस्थित है तो हम किस सामाजिक परिवर्तन की बात कर रहे हैं ? मतभेद मनभेद में जरूर बदल जाता है। आज समास से अधिक हमें विग्रह या विच्छेद पसन्द है। आज कविता की क्लोनिंग हो रही है। मानकीकरण और समरूपीकरण भी एक समस्या है। आज आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस भी लेखन के लिए एक खतरा बन कर आ रहा है। लेकिन कृत्रिम मेधा तो लेखन में पहले ही से सक्रिय है। अब अनेक रोबोट यांत्रिक भाव बोध की कविता लिख रहे हैं। इसलिए उस टाइप जनवादी कविता को जन ने पढ़ना छोड़ दिया है। आज बाजार और तकनीक के आक्रमण और सोशलमीडिया के अनुप्रयोग के अतिरेक ने स्वाध्याय की संस्कृति को विक्षत कर दिया है। अब कुछ विशिष्ट लोग ही साहित्य पढ़ते हैं। किन्तु इसी सोशलमीडिया ने साहित्य की आम आदमी तक पहुँच भी बनाया है। आज भी कालिदास, तुलसीदास, शेक्सपियर का प्रभाव समाज पर है। आज कोई कालजयी सृजन अलक्षित है। कोई क्लासिक काव्य लिखने के लिए अनेक भाषाओं के क्लासिक कृतियों का गहन अनुशीलन अपरिहार्य है। संपादक और प्रकाशक को भी अपनी कूपमंडूकता और कट्टरता छोड़ कर मध्यमा प्रतिपदा का अनुसरण करते हुए एक लोकतांत्रिक परिवेश का निर्माण करना होगा। आज खोटे सिक्कों ने खरे सिक्कों को अपदस्थ कर दिया है। सार्थक सृजन या उदात्त लेखन को अस्सी प्रतिशत कूड़ा-लेखन ने ढक लिया है। फेसबुक पर गालियाँ बरसने लगीं तो ज्ञानेन्द्र पति जैसे साधकों ने इस माध्यम को अपनाने में संकोच किया। किन्तु इसी सोशलमीडिया ने संपादकों और घरानों के लेखकों का वर्चस्व भी तोड़ा है। कुछ किराये की कोख से जन्मे लेखकों ने इस समस्या को और जटिल बनाया है और जिनकी आंख का जन्म रूस या ब्रिटेन में हुआ है, उनके लेखन का अजनबी पन भी आम आदमी को कविता के छंद से दूर ले गया। मुक्त छंद की कविता अब छंद मुक्त हो गई है। आज मूलतः गद्य-युग है तो वह पढ़ा भी जाता है। किन्तु लेखन विचारोत्तेजक होना चाहिए, सनसनीखेज़ नहीं। उसमें नयी आकस्मिकता का सन्निवेश हो। हम या तो प्रगतिशील सोच के नाम पर प्रेम को निर्वासित कर देते हैं, या फिर रति क्रिया की कहानी लिखने में रस लेने लगते हैं। हमें समग्र जीवन-बोध का अध्वर्यु होना चाहिए, जहाँ तत्सम के पड़ोस में तद्भव मौजूद हो। सामासिक निष्पत्ति यह है कि हम अपनी कलम की नोंक पर परम्परा का बोझ संभाल कर लिखेंगे तो परात्पर कविता सम्भव होगी और वह पढ़ी भी जाएगी। और उसका समाज पर सकारात्मक प्रभाव भी पड़ेगा। हमें प्राचीन और अर्वाचीन, प्राच्यविद्या और पाश्चात्य विज्ञान का समेकित अनुशीलन समावेशी दृष्टि बोध के साथ करना चाहिए और विखंडन वाद के बजाय अद्वैत वादी दृष्टि अर्जित करनी चाहिए। प्रेमचंद का आदर्शोन्मुख यथार्थ वाद सर्वोत्तम शिल्प है। और चरित्र-निर्माण, समाज-निर्माण तथा संवेदना का संस्कार ही साहित्य का प्रयोजन भी है। तभी कोई कविता के देश की नागरिकता लेना चाहेगा।

–कन्नौज, मो. 9839611435

समीक्षा

समकालीन धारावाहिकों का चरित्र...

अजित कुमार राय

स्टार प्लस धारावाहिक-कथाओं का प्रमुख दृश्य चैनल है। इसकी थीम है... रिश्ते वही, दृष्टि नई। किन्तु इस नई दृष्टि के आलोक में रिश्ते वही नहीं रह पाते। यहाँ सम्बन्धों में बदलाव वस्तुतः मूल्य-दृष्टि में बदलाव का द्योतक है। मूल्य-निर्माण से अधिक मूल्य-ध्वंस इनमें लक्षित किया जा सकता है। ये सीरियल शुरू हुए थे तो अपनी सादगी में सामाजिक-पारिवारिक जीवन-स्थितियों, समस्याओं अन्तर्द्वन्द्व, एवं मानसिक मुद्राओं का अनावरण इनका लक्ष्य था। किन्तु जल्दी ही बाजारवाद इन पर हावी हो गया और ये सीरियल चमक-दमक, तड़क-भड़क और प्रणय की बहुरंगी छवियों से लैस हो गए। काम-पीड़ा और नग्नता का प्रादुर्भाव हुआ और त्रिकोणीय प्रेम के फार्मूले को सर्वनिष्ठ रूप से अपनाया गया। एक ही नायक या नायिका से कई-कई बार विवाह होने और फिर टूटने की कहानी हास्यास्पद नहीं, विदूषकत्व की सीमा का स्पर्श करती है। यह नारी-स्वाधीनता संग्राम है या उसकी अस्मिता को क्षतिग्रस्त करने की उद्यमिता ? स्त्री विमर्श को देह-विमर्श में रिड्यूस कर दिया गया है। सीरियल की कहानी को रबर की तरह खींचते रहते हैं और पात्रों को कठपुतली की तरह नचाते हैं। जटिलता और तनाव बनाए रखने के लिए पहले प्रेमी और प्रेमिका को नजदीक ले आते हैं और सम्पूर्ण मिलन से पहले फिर दूर ले जाने लगते हैं। इस क्रम में किसी दूसरे प्रेमी या फिर प्रेमिका के नजदीक ले जाते हैं। यह पास आने और दूर जाने का अन्तहीन ग्राफिक सिलसिला चलता रहता है। कोई कलाकार दूसरे सीरियल में काम करने लगता है तो कथानक में उसे मार दिया जाता है। "ये रिश्ता क्या कहलाता है ? "जैसे सीरियल चार पीढ़ियों की कहानी का संवहन करते हुए आज तक चल रहे हैं और 'इमली' भी तीन पीढ़ियों तक चली। "सास भी कभी बहू थी।" से "घर-घर की कहानी" शुरू हुई थी। लेकिन शीघ्र ही यह अहसास हो गया कि यह हमारे घर की कहानी नहीं है। तर्क की कसौटी पर कहानी उखड़ जाती है। किसी नायक को खलनायक में बदल देना इनका शगल है। इनकी भाषा हमारे आधुनिक समाज को परावर्तित करती है और बीच-बीच में नृत्य और गीत के सांगीतिक आयोजन होते रहते हैं, किन्तु इनका अनुपात कम ही होता है। फिल्म या सिनेमा की अपेक्षा सीरियल की कहानी बहुत धीमी गति से चलती है और एक ही बात को ऊब की सीमा तक खींचते हैं। आदर्श प्रेमी अपने प्रिय से उसकी सुरक्षा या कल्याण के लिए तथ्यों को उस सीमा तक छिपाता है कि वह अनिष्ट गामी बन जाए। यदि कोई पात्र कुछ कहना चाहता है तो उसके संवाद को सामने वाला सुनता ही नहीं, वह अपनी जोतता रहता है। कथानक को अपेक्षित मोड़ देने के लिए प्रायः ऐसा किया जाता है। नायक-नायिका समझौता करके विवाहित होने का नाटक करते हुए एक ही कमरे में पति-पत्नी की तरह साथ साथ रहते हैं लेकिन संसर्ग विहीन। जैसे झनक विहान की नकली पत्नी बनकर यौन शुचिता के साथ उसके कक्ष में ही रहती है, लेकिन जिस अनिरुद्ध के साथ किन्हीं परिस्थितियों में उसकी शादी हुई है और वह उससे अन्तहीन प्रेम भी करती है, उसे भावात्मक रूप से अपने से दूर करने की कोशिश करती रहती है, ताकि वह अर्शी के साथ अपनी शादी शुदा जिन्दगी निर्बाध रूप से बिता सके। यह देह-त्याग या अतीन्द्रिय प्रेम का प्रतिमान है। लेकिन कभी अनी, कभी कपूर और कभी विहान के साथ उनके घर पर रहना उसे अव्यावहारिक नहीं लगता। वह एक शिक्षित लड़की है और आत्म सम्मान की सुरक्षा हेतु तर्क-पद्धति का आश्रय लेती रहती है। उसे नृत्य अपने कैरियर के रूप में चुन लेता है और कलाकार के जीवन की आन्तरिक संरचना, संगति और विसंगतियों को उनके मूल अक्ष पर बेधते हुए इस सीरियल में पारिवारिक समस्याओं और विघटन को उद्घाटित किया गया है। एक अनाथ लड़की अनन्त अन्तर्वेदना को सहती हुई मृत्यु से बार-बार टकराती है और अपनी दुर्दम्य जिजीविषा को प्रमाणित करती है। मृत्यु गंधी घाटियों में जिन्दगी का राग रचती है। उसमें शालीनता के साथ-साथ दृढ़ प्रतिरोध भी मौजूद है। किन्तु आज तो मीडिया भी मूल्य-निर्माता नहीं, छवि-निर्माता प्रतिष्ठान बनकर रह गया है। अतिरंजित चित्रण और सर्वायामी अतिरेक से बचते हुए कैसे सन्तुलन स्थापित किया जाए और इसी समाज की पुनर्रचना की जाए, यह धारावाहिकों के लिए एक बड़ी चुनौती है। आधी दुनिया इसे देखती है तो हम इनके जीवन-शिल्प की उपेक्षा नहीं कर सकते। हम खीझ कर इसे देखना छोड़ सकते हैं लेकिन आधी आबादी के मानस को निर्मित करने के कारण इसे निर्दिष्ट करना अपरिहार्य है। अन्तर्वस्तु और संरचना में एक तार्किक अन्विति आवश्यक है। **कन्नौज, मो. 9839611435**

समीक्षा

साहित्य का संविधान और क्षरित होता जनतंत्र...

अजित कुमार राय

"रामचरितमानस" में निहित निगमानुशासन को सामाजिक शील की आदर्श संहिता या कोड आफ कंडक्ट कह सकते हैं। जिसमें समय-समय पर संशोधन होते रहे हैं। सम्बन्धों का सेतुबंध या स्पेक्ट्रम इसमें संलक्ष्य है। बाल्मीकि, व्यास, कालिदास, वाणभट्ट और भवभूति के काव्य-नाटकों में अन्तर्निहित वैशिष्ट्य को अन्वेषित करते हुए संस्कृत सौन्दर्य शास्त्र की रचना हुई होगी। काव्य की मर्यादा निर्धारित करने के लिए काव्य शास्त्र का प्रणयन होता है और उसके गुण-दोषों के विवेचन की आधार-सैद्धान्तिकी उपलब्ध होती है। किन्तु श्रेष्ठ साहित्य निरंकुशता या स्वाधीन चेतना के कारण इस सैद्धान्तिक प्रतिमान को चुनौती देता रहता है। आज कर्त्तव्य पथ के आकाश में उड़ते तिरंगे गुब्बारे बहुरंगी स्वाधीनता के साथ ही बहुलता वादी सामासिक संस्कृति का रूपक रचते हैं। कभी स्वर्णिम इतिहास वाले सम्राट अशोक और चन्द्रगुप्त के भारत में हम इतने पराधीन हो गए थे कि अपना नमक भी नहीं बना सकते थे और इसके लिए गांधीजी को डांडी यात्रा करनी पड़ी थी। आज वही अनेक देश चार गुना कम आर्थिक लागत के कारण अपने उपग्रह लांच करने के लिए भारत का मुंह देख रहे हैं। आज भारत अमेरिका आदि देशों को गिरमिटिया मजदूर नहीं, इंजीनियर सप्लाई करता है। आप चाहें तो उन्हें साइबर लेबर कह सकते हैं। वैश्वीकरण धर्म का भी हुआ है। स्वामी विवेकानंद ने इसे शिकागो में चरितार्थ किया था। आज महाकुम्भ, प्रयागराज में अनेक विदेशी संन्यासी इस पर मुहर लगाते हैं। भारत को यह गौरव असंख्य लोगों के बलिदान के बाद मिला है। महात्मा गॉंधी, चन्द्रशेखर आजाद, सरदार भगत सिंह, सुभाषचंद्र बोस आदि का नाम तो इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा हुआ है, किन्तु अनेक अनाम व्यक्तियों के उत्सर्ग अलक्षित ही रह गए... कलम आज उनकी जय बोल।

जला अस्थियाँ बारी बारी,
छिंटकाई जिनने चिनगारी।
जो चढ़ गए पुण्य वेदी पर
लिए बिना गर्दन की मोल।।
जिनकी चकाचौंध का मारा,
क्या जाने इतिहास बेचारा।
जिनकी महिमा के साक्षी हैं,
सूर्य, चंद्र, भूगोल, खगोल।।

शहीदों ने अपने रुधिर से सींच कर आजादी के फूल खिलाए और आज उसे धूलिसात् करने के लिए हमारे नेता रक्तदान करते हैं। आज भी चुनाव में रेवड़ियाँ बांटी जाती हैं और विद्यालय में मिड डे मील। यह हमारे कुपोषित और विपन्न भारत का सूचक है। मुट्ठी भर अरबपतियों के शाइनिंग इण्डिया से वास्तविक भारत कितना भिन्न है! इस भिन्न को उद्विग्न बनाने की जरूरत है। हमारा एक पैर तो बहुत तेज दौड़ रहा है, लेकिन दूसरा घिसट रहा है। यह सम्पूर्ण प्रगति कैसे कही जा सकती है ? हम चांद पर चढ़ाई कर रहे हैं और पैरों के नीचे की पृथ्वी खिसक रही है। दिनकर ने कभी लक्ष्य किया था...

श्वानों को मिलता दूध कहीं, भूखे बच्चे अकुलाते हैं।
माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर, जाड़े की रात बिताते हैं॥

आज वैषम्य की यह खाईं और चौड़ी हुई है। गरीब और गरीब तथा अमीर और अमीर होते जा रहे हैं। यद्यपि गरीबी का अर्थोत्कर्ष हुआ है और नाली साफ करने वाले के पास भी एक एन्ड्रायड मोबाइल मौजूद है। विकास तो हुआ है और मंगल ग्रह पर हम एक दिन में नहीं पहुंच गए हैं। अपनी अनेक दुर्बलताओं के बावजूद पंडित जवाहरलाल नेहरू, लालबहादुर शास्त्री और अटल बिहारी वाजपेयी महान राष्ट्र नायक थे। उन्हीं अर्थों में जिसमें डॉ राजेन्द्र प्रसाद, डॉ राधाकृष्णन, ए पी जे अब्दुल कलाम और प्रणव मुखर्जी महान राष्ट्र पति थे।

भारत एक गणराज्य है और सभी प्रान्त स्वायत्त हैं। सभी भावात्मक एकता के सूत्र में आबद्ध हैं। किन्तु साहित्य में सहित का भाव नष्ट हो गया है और शिविरबंदी अपने चरमोत्कर्ष पर है। परम्परा वादी लेखक का बयना प्रगतिशील लेखक के घर नहीं जाता। आज साहित्य की भी

एक सत्ता निर्मित हो गई है और रागदरबारी स्वर मुखरित होने लगा है। जब देश पराधीन था, तब भी हम सांस्कृतिक रूप से स्वाधीन थे और सत्ता को ठेंगे पर रखा...

संतन कहा सीकरी सों काम।

आवत जात पन्हैया घिसिहैं, बिसरि जाहिं हरि नाम।।

कबीर, जायसी, सूर और तुलसी तब भी स्वाधीन थे और पर्णकुटी में रह कर त्याग का प्रतिमान रचा। कामायनी और गोदान स्वाधीन भारत में नहीं लिखे गए। मूल्यपरकता और सर्जनात्मक आचरण की वह दीक्षा विलुप्त हो गई। आज साहित्य के कामरेड सत्ताधीशों से पुरस्कार और प्रमाण पत्र पाने के लिए उनके चरणों में बिछ जाते हैं और अपनी आत्मा का तर्पण कर देते हैं। ये जूना अखाड़े के सच्चे महंत हैं। कहाँ बोलना है और कब चुप रहना है, ये भलीभाँति जानते हैं और ये पालिटिकली करेक्ट बने रहने में कुशल हैं। कश्मीर के नरसंहार पर ये सयानी चुप्पी ओढ़ लेते हैं और गोधरा कांड पर समवेत गान। वेदों की धज्जियाँ उड़ा देते हैं लेकिन कुरान की आलोचना करने की हैसियत इन्हें अल्लाह ने बख्शी नहीं है। इनकी धर्मनिरपेक्षता रंगभेद की नीति का शिकार है। इनके अनेक अंधविश्वास हैं लेकिन ये अपने ब्लाइंड स्पाट देखने को तैयार नहीं। दूसरीओर परंपरा के अनुयायी हैं जो अपनी कूपमंडूकता छोड़ने को तैयार नहीं। स्वाध्याय की संस्कृति से दूर ये शुद्धतावादी विरोधी विचार सरणियों से अन्त:क्रिया कर उदार सत्य तक पहुँच पाने में असमर्थ हैं और वैज्ञानिक उपलब्धि को वेद में ढूँढ लेते हैं। दोनों को अपनी कट्टरता छोड़कर एक समावेशी दृष्टि बोध अर्जित करने की जरूरत है...

अरे इन दोउन राह न पाई।

आज साहित्य में शास्त्रार्थ और आलोचना का स्पेस कम होता जा रहा है। राजनीति में जो लेखक मोदी की तानाशाही की आलोचना करने में थकते नहीं, वे लेखन में अपनी आलोचना सह नहीं पाते। असहिष्णुता उनका जीवन-दर्शन है। साहित्य की सत्ता भी अपने आलोचक को निर्वासित कर देती है। इस लिए इस विखंडन वादी युग में संवाद को विमर्श ने विस्थापित कर दिया है और मतभेद मनभेद में पर्यवसित हो गया है। यह जनतंत्र के सिकुड़ जाने का सूचक है। हम तिरंगा को एकरंगा बनाने पर तुले हुए हैं।

–कन्नौज, मो. 9839611435

इस बार दिल्ली के पुस्तक– मेले में मदन कश्यप, ओम निश्चल, लीलाधर मंडलोई, महेश कटारे, श्रीप्रकाश शुक्ल, वीरेन्द्र सारंग, हरेराम पाठक, सुधेन्दु ओझा, हरिशंकर राढ़ी, मायामृग, अनिल पाण्डेय, कल्पना मनोरमा, अंजुम शर्मा के साथ ही "आज तक" के साहित्य संपादक जयप्रकाश पाण्डेय के साथ आत्मीय मुलाकात हुई। कुछ पुस्तकों को अपनाया और सुभाष वशिष्ठ जी की किताब के लोकार्पण समारोह में भी शामिल हुए। अभी कुछ और मनीषियों से भेंट होगी। यह इस मेले की उपलब्धि है।

समीक्षा

तेरा जन एकाध है कोई...

अजित कुमार राय

जीवन्मुक्त होना और जीवन से मुक्त होने में फर्क है। मोक्ष की इस परिभाषा में ही विसंगति है। कुम्भ मेले में भगदड़ मच जाने से तीस लोगों की मौत की घटना आस्था के पुनर्गठन की मांग करती है । अमृत-पान की प्रत्याशा में मृत्यु का वरण! अत्यधिक पुण्य अर्जित करने की परिणति महापाप में! पौराणिक कथाओं के प्रति विश्वास ठीक है लेकिन उसके गहरे आशयों का उत्खनन जरूरी है। आज गंगा नदी में स्नान पवित्रता का बोध तो जगाता है, स्वच्छता का नहीं। संगम में स्नान साधना में सहायक है, किन्तु काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि आश्रवों को धुले बगैर या इन षड् मनोविकारों को अतिक्रान्त किए बिना वास्तविक मुक्ति संभव नहीं है। इसके लिए अन्ततः मुक्ति की भावना से भी मुक्त होना होगा। जीते जी सांसारिकता के प्रति मर जाना या माया से निर्लिप्त हो जाना निर्वाण को उपलब्ध कर लेना है। इसके लिए किसी मठ या अखाड़े में दीक्षित होना जरूरी नहीं है। हां, जीवित गुरु के निर्देशन की जरूरत है। अपने भीतर डुबकी लगाएं...

आत्मन्ये वात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदुच्यते।

कृष्ण ने गीता में स्थित प्रज्ञ का लक्षण बताया है कि जो अपनी आत्मा में ही सन्तुष्ट है । अपने मन को साक्षी भाव से देखना। निर्भाव के बिन्दु से भावों का दर्शन। यह कठिन साधना है। मन की माला बहुत लम्बी है। क्रोध के उठते धुएँ को देखना, मन की संरचना का वीक्षण कष्टसाध्य है। इस कांटे पर सोना कठिन है। मन के ताप को सहना दुष्कर है । यह घर पर भी किया जा सकता है । इसके लिए संगम या हिमालय पर जाना जरूरी नहीं है। धर्म भी अब बाजारवाद के दायरे में है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण को तिलांजलि दे दी है हमने। आध्यात्मिक अनुभव परा वैज्ञानिक हैं, अवैज्ञानिक नहीं। यह आत्मानुभूति और आत्मानुसंधान का विषय है। इसके लिए आत्मानुशासन और संयम की आवश्यकता है और यह होता तो आज भगदड़ में अनेक लोगों की जान नहीं जाती।

केशव! कहि न जाइ का कहिए।

इतना तो केशव दास को भी समझ में आ गया था...

केसव जिनके मन हाथ सदा,

घर ही वन है, वन ही घर है।

मन पर नियंत्रण है तो वन में जाने की जरूरत नहीं है। मन पर नियंत्रण नहीं है तो भीड़ पर नियंत्रण कैसे होगा ? पुण्य का लाभ और लोभ भी वणिक-बुद्धि का सूचक है। और पुण्यतिथि का निर्धारक भी। धन या पुण्य का संग्रह नहीं, अपरिग्रह हमारा जीवन-दर्शन होना चाहिए । मेरी आकांक्षा थी कि संगम में जाकर अन्त:सलिला सरस्वती में स्नान करने के बाद स्नातक होंगे । शंकराचार्य, रमेश भाई ओझा, श्री राम भद्राचार्य और अघोर पंथी साधुओं से सत्संग करेंगे । किन्तु भीड़ का दबाव अपने एकान्त की ओर ठेलता है। यातायात की अव्यवस्था यदि अपने भीतर की व्यवस्था दे सके तो यह कष्ट सार्थक हो सकता है । सनातन धर्म की शक्ति में ही कहीं उसकी दुर्बलता तो नहीं छिपी है! शंकराचार्य, विवेकानंद और ओशो की औपनिषदिक व्याख्याएँ गहराई से समझने की जरूरत है । कबीर कहते हैं... तेरा जन एकाध है कोई।

काम, क्रोध अरु लोभ विवर्जित, हरि पद चीन्हैं सोई।

कहाँ तो अनियंत्रित जनसैलाब की त्रासदी और कहाँ अपने भीतर के प्रयाग में ज्ञान यज्ञ का अनुष्ठान!

–कन्नौज, मो. 9839611435

आस्था स्नान

उपन्यास 'न आने वाला कल': पड़ताल और पड़ताल

आलोचनात्मक दृष्टि : मेरी नज़र में उपन्यास

सन्दीप तोमर

मोहन राकेश एक कुशल कहानीकार, नाटककार, उपन्यासकार के रूप में जाने जाते हैं। वे नयी कहानी आन्दोलन के सशक्त हस्ताक्षर थे, पंजाब विश्वविद्यालय से हिन्दी और अंग्रेज़ी में एम. ए. किया। जीविकोपार्जन के लिये अध्यापन कार्य किया। कुछ वर्षो तक 'सारिका' के संपादक भी रहे। 'आषाढ़ का एक दिन','आधे अधूरे' और 'लहरों के राजहंस' रचनाकार के रूप में उन्होंने खूब ख्याति अर्जित की। उन्होंने कुछ उपन्यास भी लिखे- 'अंधेरे बंद कमरे' 1971, 'अन्तराल' 1972, 'न आने वाला कल' 1968, 'काँपता हुआ दरिया' (अपूर्ण), 'नीली रोशनी की बाँहें' नामक उपन्यास उनके नाम दर्ज हैं। मोहन राकेश का तीसरा व सबसे लोकप्रिय नाटक 'आधे अधूरे' है। जिसमें उन्होंने मध्यवर्गीय परिवार की दमित इच्छाओ, कुंठाओ व विसंगतियो को दर्शाया है। इस नाटक की पृष्ठभूमि एतिहासिक न होकर आधुनिक मध्यवर्गीय समाज है। 'आधे अधूरे' में वर्तमान जीवन के टूटते हुए संबंधो, मध्यवर्गीय परिवार के कलहपूर्ण वातावरण विघटन, सन्त्रास, व्यक्ति के आधे-अधूरे व्यक्तित्व तथा अस्तित्व का यथात्मक सजीव चित्रण हुआ है। जो वातावरण उनके नाटकों में उपस्थित होता है अमूमन वही अन्य रूप में उनके उपन्यास 'न आने वाला कल' में भी देखा जा सकता है, यहाँ भी लेखक टूटते सम्बन्ध, अपूर्ण व्यक्तित्व, मध्यवर्गीय परिवारों की समस्याएँ और विसंगतियां लेकर उपस्थित है। 'न आने वाला कल' मोहन राकेश द्वारा रचित एक ऐसा उपन्यास है जो एक व्यक्ति द्वारा लिए गए स्कूल से त्यागपत्र के निर्णय को लेकर कई प्रकार की प्रतिक्रियाएँ हमारे सामने पेश करता है। इस एक निर्णय को लेने के कारण लेखक अपने मन को विभिन्न

परिस्थितियों में रखकर तुलनात्मक दृष्टिकोण से जीवन के कई पहलू उजागर करता है।

लेखक का स्वभाव, पत्नी से रिश्ता, स्वाभिमान की आड़ में छिपा दब्बूपन, हेडमस्टर का हौवा, साथियों से अनमनापन, परिणामों से बेपरवाही, दबंगपना, पश्चाताप की भावना, सहानुभूति, तटस्थता, सामाजिक हदबंदी आदि भावनाओं को इस उपन्यास में बखूबी उभारा गया है।

उपन्यास में लेखक द्वारा एक विशेष परिस्थिति में फँसे व्यक्ति की प्रतिक्रियाओं को बहुत सूक्ष्म रूप में वर्णित किया गया है। यह न केवल समाज में फैली अनैतिकता को अभिव्यक्ति देता है, बल्कि उसको झेलते व्यक्ति की त्रासदी का मार्मिक चित्रण भी प्रस्तुत करता है। घटना और अनुभूति का इतना उत्तम संगम अन्यत्र दुर्लभ है। उपन्यास तेजी से बदलते आधुनिक जीवन में व्यक्ति के आर्थिक संघर्ष, स्त्री-पुरुष संबंध को बड़ी सूक्ष्मता से चित्रित करता है। लेखक कहानी के आरम्भ से अन्त तक 'अतीत के चलचित्र' की भाँति मात्र यादों में खोया रहता है। कहा जा सकता है कि कहानी मात्र एक दिन में सिमटी हुई है।

एक दिन मनोज सक्सेना अपने 3 वर्ष के स्कूल मास्टर के जूनियर हिन्दी अध्यापक के पद से इस्तीफा दे देता है। यह उसका अपना स्वभाव है कि जब वह आवेशित होता है या तनावग्रस्त होता है तो वह अचानक ऐसा कुछ कर डालता है जो आश्चर्यजनक तो होता ही है, उससे उसे बाद में पश्चाताप भी महसूस होता है। उदाहरण स्वरूप-विधवा से शादी करने का निर्णय।

हमेशा अंदर से कुछ और चाहते हुए भी बाहर से एक मुखौटा पहने रहना ताकि दूसरों की नज़रों में अच्छे बने रहा जाए, अपने भीतर के गुस्से की चुभन को पीसते हुए एक नयी शुरुआत करने की कथा प्रकटीकरण है ये उपन्यास।

'न आनेवाला कल' उपन्यास में एक भारतीय क्रिष्टियन स्कूल

के वातावरण का चित्रण है। मोहन राकेश ने इस उपन्यास में आत्मकथात्मक शैली को अपनाया है। नायक के रुप में "मैं" को प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास की कथा-वस्तु बहुत संक्षिप्त है। उपन्यास के आरंभ में चौपाल के नीरस वातावरण तथा विद्यालय की छिद्रान्वेषी कूटनीति से कथा-प्रवाह आगे बढ़ता है। नायक हिंदी अध्यापक है जो तीन साल पूर्व ही नियुक्त हुआ है। पूर्व-पत्नी की मृत्यु के पश्चात दूसरी पत्नी शोभा के दुर्व्यवहार से वह इतना खिन्न होता है कि एक दिन विद्यालय से त्याग-पत्र दे देता है। उसके इस त्याग-पत्र पर विद्यालय में व्यापक प्रतिक्रिया होती है। हेड मास्टर से लेकर चपरासी और उसकी बीबी तक उसके निर्णय से प्रभावित होते हैं। अंत में नायक विदाई लेकर चला जाता है। पति-पत्नी के तलाक और अलगाव को लेकर लेखक ने इस उपन्यास का ताना-बाना बुना है। लेखक इसकी कथा के माध्यम से पाठकों के समक्ष कोई स्पष्ट तस्वीर रखने में नितांत असमर्थ प्रतीत होता है। उपन्यास के अधिकांश पात्र अपने अस्पष्ट विचारों के चलते निराले प्रतीत होते हैं। सभी पात्र हिवलर, नुरुला काशनी, शोभा, बानी आदि अपने चारों ओर खिंची हुई परिधि का भ्रमण करते हुए यह जान पाने में असमर्थ हैं उनका उद्देश्य क्या है ? उनके सामने 'आने वाले कल' की रुप-रेखा भी स्पष्ट नहीं है। मोहन राकेश ने उपन्यास में आधुनिक जीवन की विसंगतियों, संत्रास, अकेलेपन, मानव संबंधों की कृत्रिमता और मृत्यु-भय आदि को अस्तित्ववादी चिंतन के प्रकाश में स्पष्ट करने के चेष्टा की है। वे ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करते हैं जिनसे मुक्ति पाने के लिए व्यक्ति में छटपटाहट पैदा होती है। शोभा नायक में पूर्व पति की छवि को देखना चाहती है, वह खुद में स्पष्ट नहीं है कि आखिर वह चाहती क्या है, ऐसी ही स्थिति नरूला की भी है। ये दोनों पात्र अपने अतीत और वर्तमान में रहते हुए, अहं को चोट पहुँचाते हुए अपने अस्तित्व की समस्या से जूझते रहते हैं।

उपन्यास नितांत यथार्थवादी दृष्टिकोण से लिखा अवश्य गया है लेकिन यह बिल्कुल भी यथार्थवादी नहीं है। अधिकांश स्थानों पर इतनी मानसिक ऊहा-पोह और तर्क-वितर्क है कि पाठक को कथा से ही ऊब होने लगती है। उपन्यास का अंत भी जिस अप्रत्याशित और जुगुप्सित तरीके से उन्होंने किया है उसे देखकर लगता है कि क्या यह 'आषाढ़ का एक दिन', 'आधे अधूरे' और 'लहरों के राजहंस' के रचनाकार मोहन राकेश जैसे यशस्वी लेखक की ही कृति है ? शायद मोहन राकेश की यह कृति टैगोर के उपन्यासों से भी अधिक उबाऊ हो गयी है। मोहन राकेश इस उपन्यास की नीरसता को दूर करने के लिए अश्लीलता का सहारा लेते भी दिखाई देते हैं लेकिन यहाँ उनका यह उपाय भी कारगर साबित नहीं होता। यदि यह उनकी प्रथम कृति होती तो सम्भव था कि पाठको, आलोचकों, समीक्षकों को उनसे अधिक की अपेक्षा न होती लेकिन चूँकि वे ख्याति-प्राप्त एवं संवेदनाशील रचनाकार रहे तो उनकी लेखनी से इस प्रकार स्त्री-पुरुष के अनैतिक संबंधों के कथ्य के रुप से लेकर इस उपन्यास की निसृत होना उनके आलोचकों और पाठकों दोनों के लिए ही अत्यंत आश्चर्यजनक रहा। एक विद्यालय यदि अध्यापक अपने विद्यालय के चपरासी की पत्नी के साथ जिस्मानी सम्पर्क करे, तो ये इस पेशे के हिसाब से अनुचित और अवांछनीय कर्म है। यहाँ मोहन राकेश की वर्णन की शैली भी चौकाने वाली है। यद्यपि विभिन्न समस्याओं के प्रतिपादन व विशिष्ट जीवन-दृष्टि व संवेदना की अभिव्यक्ति के लिहाज से यह उपन्यास कोई प्रभाव नहीं छोड़ता लेकिन विसंगतिपूर्ण परिवेश में आधुनिक मानव की नियति/बदनियति, उसकी अस्तित्ववादी विचार-धारा को अभिव्यक्ति देने में अवश्य ही सफल रहा है।

उपन्यास का सार-संक्षेप

मनोज सक्सेना, पैंतीस वर्ष अकेले बिताने के बाद एक दिन शोभा से, जिसे वह कुछ ही दिनों से जानता था, जो विधवा होने के बाद अपने पिता के घर रहने आई थी, विवाह कर लेता है। काफी समय साथ रहने के बाद भी दोनों औपचारिकता का संबंध ही निभा रहे थे। 'यह जान लेने के बाद कि न तो हम अपनी-अपनी हदें तोड़ सकते हें और न ही एक-दूसरे की हदबंदी को पार कर सकते हैं, हमने एक युद्ध विराम में जीना शुरू कर दिया था। 'और फिर एक दिन शोभा अपने पहले पति के घर खुरजा चली जाती है। अपने पीछे कई सवाल छोड़े हुए। वह मनोज से रिश्ता तो बनाए रखना चाहती है लेकिन अपनी कुछ अनकही शर्तों के साथ।

मनोज फिर से अपने अकेलेपन की ज़िन्दगी जीने लगता है और रोज़ रात को सोने से पहले के 5-6 घण्टे, जो कि सिर्फ खाली समय होता था, बहुत धीरे आगे बढ़ते थे। और इन्हीं घण्टों में ज़िन्दगी के पिछले कुछ वर्षों की परतें एक-एक करके उधड़ती चली जाती हैं।

मनोज को याद आता है वह दिन जब शोभा को पहली बार घर लाया था और उसने अपने अकेले घर में रहते अकेले मन की बात बताई थी और शोभा का कहना कि 'तुम सब चीजों से

छुटकारा पाना नहीं चाहते, सही मायने में अपने लिए घर चाहते हो।' मनोज के घर में टूटा-फूटा सामान भरा था। तब शोभा ने कहा था- 'क्या-क्या कूड़ा भर रखा है तुमने यहाँ ! मैं यहाँ आकर पहला काम करूंगी कि यह सामान उठवा कर इसकी जगह नया सामान मंगवाऊँगी।' पर मनोज ने बताया कि उसके पास नए सामान के लायक पैसे नहीं हैं और दूसरा सामान स्कूल से मिलेगा नहीं।

कुछ था जिससे वह छुटकारा पाना चाहता था। उसी उहापोह में उसे स्कूल के जूनियर हिन्दी मास्टर के रूप में जिन्दगी उसकी अपनी ज़िन्दगी नहीं लगती थी। शोभा के पति के रूप में भी वह इसे जिन्दगी नहीं मानता था। लेकिन उसे यह भी मालूम था कि त्यागपत्र देने से शोभा के साथ सम्बन्ध की स्थिति हल नहीं हो सकती। वह दोनों ही समस्याओं का हल निकालना चाहता था लेकिन अचानक उसके सामने अन्य समस्याएँ खड़ी हो जाती थीं। आत्महत्या का विचार तो था लेकिन हर स्थिति के परिणाम को स्वयं देखने की चाह, मन को इस पटरी पर जाने से रोक देती थी।

शोभा को पत्र लिखना चाहते हुए भी कभी पत्र पूरा नहीं हो पाया और लिखा गया स्कूल हेडमास्टर मिस्टर व्हिस्लर को स्कूल छोड़ने का त्याग पत्र। त्यागपत्र देते ही उसे ऐसा लगने लगा जैसे स्कूल का हर कर्मचारी उससे बात करना चाहता हो। मिस्टर बुधवानी, हेडमास्टर के माइंड का एक आईना था। त्यागपत्र वाले दिन वह कुछ ज़्यादा ही उत्तेजित था। मिसेज पार्कर कापियाँ जाँच रही थीं जो कभी भी पूरी नहीं जाँची जाती थी, कोहली जेम्स बॉनी हाल, एकमात्र कुंवारी मेट्रन, मिसेज़ ज्याप्रर्फे, मिस्टर व्हाइट, मिस्टर क्राउन सभी उसका मन टटोलते नज़र आ रहे थे।

मनोज सोचता है-''मैंने त्यागपत्र क्यों दिया। '' यह सवाल उसके अन्दर से भी कोई बुधवानी या पार्कर उससे पूछ रहा था। वह इस बात से भी डरा हुआ था कि कहीं मिस्टर व्हिसलर के पास जाने से उसका निश्चय टूट न जाए।

मिस्टर बुधवानी के समाचार देने और आग्रह करने पर ही मनोज हेडमास्टर से मिलने जाता है। हेडमास्टर से स्कूल में सभी डरते हैं। उनका खौफ इस कदर छाया था कि कोई ठहाका मारकर हँस नहीं सकता, समय से लेट नहीं हो सकता, कक्षा नहीं छोड़ सकता। असुविधा की स्थिति में शिकायत नहीं कर सकता और न ही अपनी इच्छा से स्कूल में खाना आराम से खा सकते। छोटी सी कापियाँ जाँचने की गलती हो या लेट होने की, हेडमास्टर अच्छी क्लास लेता था। सभी एक तरह से उसे बर्दाश्त कर रहे थे।

हेडमास्टर ने मनोज के त्यागपत्र देने का कारण जानना चाहा था। वह बहुत ही बेतकल्लुफी से बात करने लगा। उसने मनोज पर किए गए तीन वर्ष पहले की मेहरबानियों की याद दिलाई। जैसे कि केवल उस अकेले को ही फैमिली क्वार्टर दिया गया था जबकि इसका कारण स्कूल से दूरी तथा बीमार पड़ोस था कि अन्य कोई वहाँ आना ही नहीं चाहता था। फिर हेडमास्टर ने उसके परिवार की भी पूछताछ की। पारिवारिक कारण न पता चलने पर हेडमास्टर ने हिदायत भी दे डाली 'स्कूल एक संस्था है। और संस्थाएँ व्यक्तियों से चलती हुई भी व्यक्तियों पर निर्भर नहीं करती। अपनी जगह के लिए एक आदमी बहुत अनुकूल हो सकता है, पर किसी भी जगह के लिए एक आदमी अनिवार्य नहीं होता। '

लेकिन मनोज किसी भी परिस्थिति में वहाँ रुकने को तैयार नहीं था। इसका अर्थ सभी अपने प्रकार से अटकलें लगाकर ले रहे थे। हेडमास्टर को भी यह अपने खिलाफ एक चाल ही नज़र आती है और वह उसे चेतावनी दे डालता है- ''मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि स्कूल में कौन कहाँ क्या कर रहा है, क्या सोच रहा है ? स्कूल से बाहर से जो लोग यहाँ अपना जाल बिछा रहे हैं उन्हें भी मैं अच्छी तरह जानता हूँ। ... मैं जब तक यहाँ हूँ, उनमें से कोई मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता।''

मनोज अपने सहयोगियों के कारनामें याद करता है जो किसी न किसी तरह से स्कूल व हेडमास्टर के प्रति अपना रोष प्रकट करते रहते हैं। लेकिन स्पष्ट कहने का सामर्थ्य किसी में नहीं है, नौकरी छूटने का भय सबको बना रहता है।

मनोज को स्कूल के अनुशासन का कड़ाई से पालन किया जाना गवारा तो था लेकिन बच्चों की पिटाई से वह परेशान हो जाता। लड़कों को सजा के रूप में पीठ पर बेंत मारे जाते जिसकी गवाही देनी पड़ती। इसे भी चुपचाप इस तरह सह जाना पड़ता जैसे मिस्टर व्हिसलर की त्यौरियों को और 'डाल' के नाम से खाई जाने वाली बेहूदा दाल को। यह एक तरह की सामाजिक यातना ही थी जो सिर झुकाए सभी स्वीकार करते हुए जी रहे थे।

विद्यालय के नाटक की तैयारी के दौरान जिमी ब्राइट के साथ हुई मुलाकात के दौरान मनोज को पता चलता है कि इस विद्यालय को एक प्राइवेट विद्यालय में बदलने की प्रक्रिया चल रही है जिस कारण स्टाफ के सभी सदस्य उसके त्यागपत्र का यह प्रमुख कारण मान रहे हैं। शिक्षा विभाग के किसी व्यक्ति से कोई अच्छी जान-पहचान है शायद। जिमी स्वयं हेडमास्टर से परेशान था क्योंकि

उसे नाटक का चुनाव पसंद नहीं था। उसके अनुसार यह नाटक स्कूली छात्रों के लिए उपयुक्त न था और यह उसने पूरी रिहर्सल होने के बाद ही कहा था। रोज़ भी अच्छी-खासी परेशान थी, फिर भी नाटक हुआ और रोज़, जो हमेशा एक बेहतरीन अदाकारा रही थी, ने लोगों को काफी निराश किया। उसकी अपनी उदासी ही इसका कारण रही। डिनर के दौरान रोज़ ने अपनी सारी भड़ास पूरे स्टाफ के सामने बहुत ही मार्मिक और व्यंग्यात्मक तरीके से निकाली। जिस कारण हेडमास्टर काफी नाराज़ हुआ। सभी लोग फुस-फुसाते हुए बाहर निकल गए।

पूरे डिनर के समय बानी हॉल, मनोज की तरफ आकर्षित होती रही और कुछ हरकतें करती रही। आखिर उसने मनोज से मिलने का समय ले ही लिया। ड्यूटी के आखिरी दिन, रिपोर्ट्स भरना, डिनर की ड्यूटी और फिर बानी हॉल से मिलने जाना। सब एक ही दिन की बात थी।

विद्यालयी लड़कों की रिपोटर्स भरना कुछ मुश्किल काम न था। 'उस काम में रिपोर्टों का उतना महत्व नहीं था जितना अलग-अलग तरह के वाक्य बना सकने का। जिससे लगे कि हर लड़के की रिपोर्ट बिल्कुल उसी की है- हर दूसरे से अलग तरह की।

अचानक एक दिन शोभा का एक और पत्र मनोज को मिला जिसमें उसने ज़िन्दगी के बारे में फैसला लेने को लिखा था। जिन दो समस्याओं का हल उसने एक साथ ढूँढना चाहा था उन्हें एक क्रम दे देने से ही जैसे सब कुछ गड़बड़ हो गया था। दोनों चीज़ों को आगे-पीछे रखने से पहली चीज़ दूसरी के लिए परिस्थिति बन गई थी। पत्र लिखना चाहते हुए भी मनोज शोभा को पत्र लिख नहीं पाता। वह बॉनी हॉल से मिलने की बात सोचने लगता। डिनर के लिए लगी ड्यूटी के दौरान दो एक बैरा से हेडमास्टर की तबदीली की बात हुई। सभी इस हेडमास्टर से निराश नज़र आ रहे थे। डाइनिंग हाल में ड्यूटी देते हुए अपने अंतिम अधिकार का उपयोग करते हुए मनोज ने ग्रेस के शब्द बोल डाले। सभी खाना खाते हुए हाथ अचानक रुक गए। मन में एक बदले की भावना पूरी होती नज़र आई, जब उसे खुद खाने की मेज़ पर से भूखे उठ जाना पड़ा था।

मनोज ने बॉनी को समय दिया हुआ था। वह साढ़े आठ बजे उससे मिला। बॉनी से आज उसने बहुत बातें की थी। बॉनी ने उससे शोभा के बारे में भी पूछा था। दोनों घूमते रहे, बातें करते रहे। बॉनी ने उससे कहा था, तुम बिल्कुल अलग तरह के इंसान हो, इसीलिए तुम्हारी अपनी पत्नी से नहीं बनती। इन दो घण्टों में हॉल के अन्दर, लम्बी सड़क पर, पगडंडियों पर, घाटी की मुंडेरों पर, पहाड़ियों के बीच, पेड़ों के झुरमुटों में दोनों ने अपनी जिंदगी के पृष्ठों को खोल कर रख दिया था। फिर भी कुछ था जिसकी भरपाई नहीं हो पा रही थीं। घर की पगडंडी की तरफ बढ़ते हुए तीन बातें उसके दिमाग में उभर रही थी- डिब्बे में बन्द बदजायका खाना, शाम को उसी रास्ते घिसटकर ऊपर को जाता अपना-आप और अपने में स्वतन्त्र महसूस कर सकने का वह दूर झिलमिलाता क्षण जो आकर भी अब तक नहीं आया था।

घर खाली करने के लिए सारा सामान, छाँट कर उसने अलग रख दिया था। बर्तन, कपड़े, किताबें, तस्वीरें, ढेरों पत्र, तथाकथित घर की सम्पत्ति सभी कुछ अलग-अलग फैला रखा था। पूरी रात कोहली और उसकी पत्नी शारदा की खटर-पटर की आवाजें आती रहीं लेकिन मनोज स्वयं की आपाधपी में ही व्यस्त था। कुछ सामान उसने नौकरों में बाँटा, कुछ को बेचारे गिरधरीलाल के यहाँ छोड़ा। काशनी मदद के लिए आई तो उस पूरे वातावरण के प्रति अपनी वितृष्णा प्रकट करने का एक उपाय दिमाग में झन्नाया। और फिर एक छटपटाहट सी 'हर चीज के वहाँ से निकल भागने की छटपटाहट और न निकल पाने की मज़बूरी।'

बस स्टैंड पर आने पर बस का लम्बा इन्तज़ार और स्वयं के प्रति एक चिढ़ का अहसास मनोज को हो चला था। मुचड़ा हुआ टिकट उसके हाथ में था। जिसे वह बस का नम्बर देखने के लिए बार-बार निकालता था। वह बार-बार वेटिंग रूम में जाता। सामान देखकर चिढ़ सी हुई 'क्यों उठा लाया यह सब'। सत्रह सौ इक्यावन के प्रायः सभी मुसाफिर जो कुछ देर पहले एक-दूसरे से बस के विषय में पूछ रहे थे, अब इधर-उधर छितरा गए थे। उसे अब गाड़ी मिलने की सम्भावना नहीं लग रही थी। उसने एक फल वाले को रोककर दो बासी सेब खरीद लिए और सत्रह सौ इक्यावन के टिकट को एक हाथ से मसलता कचर-कचर सेब खाने लगा।

(लेखक हिन्दी आलोचना के एक सशक्त हस्ताक्षर हैं, वर्तमान में शिक्षा-विभाग में शिक्षण कार्य में संलग्न हैं, लेखक के 4 उपन्यास, 4 कविता-संग्रह, 2 कहानी-संग्रह सहित दर्जनाधिक पुस्तकें प्रकाशित हैं, उनकी आत्मकथा भी "कुछ आँसू कुछ मुस्कानें' नाम से प्रकाशित है।)

उत्तमनगर, नई दिल्ली, मो. 83778 75009

समीक्षा

अमीरन

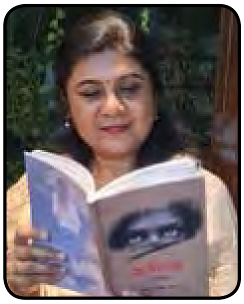

डॉ. जया आनंद

एकता अमित व्यास

सुपरिचित लेखिका एकता अमित व्यास का उपन्यास 'अमीरन' पढ़कर ऐसा प्रतीत नहीं हुआ कि यह उनका प्रथम उपन्यास है। शिल्प, कथ्य की दृष्टि से उपन्यास में प्रौढ़ता दृष्टिगत होती है।

एक स्त्री जो धनाढ्य परिवार से है उसके जीवन का ताना-बाना बुना गया है इस उपन्यास में। लेखिका उसे 'अमीरन' कहती है जो स्वभाव से अमीर है, दिल की अमीर है, व्यक्तित्व में अलग-सी छाप है। उस 'अमीरन 'के जीवन में किसी अन्य स्त्री का प्रवेश किस तरह से जीवन में उठा-पटक ला देता है किस तरह एक स्त्री का विश्वास खंडित होता हुआ प्रतीत होता है, इसका सविस्तृत वर्णन उपन्यास में हुआ है। उस अमीरन के जीवन की उलझनों में 'आर्ट ऑफ लिविंग 'का समावेश, जीवन में अध्यात्म की महत्ता को रेखांकित करता है। जीवन में प्रेम की सहज अनुभूति को उपन्यास में स्वीकारते हुए सामाजिक मर्यादा को परिपुष्ट किया गया है।

बीस खण्डों में लिखे गए इस उपन्यास की प्रमुख विशेषता है कि पाठक के भीतर इसे पढ़ते हुए कौतुहल बना रहता है साथ ही प्रेम, विश्वास, आध्यात्मिकता, जीवन मूल्यों की उपादेयता निर्दिष्ट होती है। उपन्यास की भाषा आम बोलचाल की भाषा है। उपन्यास के पृष्ठ बहुत अच्छे हैं, छपाई भी स्पष्ट और बड़े फ़ॉन्ट में है, इसका आवरण चित्र बहुत आकर्षक है। 148 पृष्ठों में सजे इस प्रथम पन्यास के लिये एकता आपको बहुत-बहुत बधाई। **सभ्या प्रकाशन / पृष्ठ 148 / लेखक : एकता अमित व्यास / मूल्य : 400/ –**

* एक बेहद रुचिकर पत्रिका

''दोआबा ने अपना पचासवां अंक देकर पत्रकारिता के इतिहास में एक कीर्तिमान स्थापित कर लिया है। जाबिर हुसेन साहेब, आपका हार्दिक अभिनंदन एवं बधाई।''

अवध विहारी पाठक

एकतारा रख कर
कबीर ने कहा
मेरी तो बगिया
नहीं थी कोई
जहां मैं अपने
सपने रोपता

फिर कैसे उगी
सपनों की ये
लहलहाती फसल

फ़सलों ने
पलट कर
जवाब दिया

याद नहीं, तुम्हारे
बुने धागे ही तो
बो दिए थे तुमने
एक दिन
अपने आंगन में

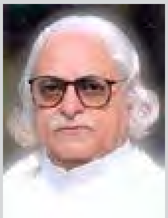

जाबिर हुसेन : 'उदास कैनवस' से

समीक्षा

क्षेत्रीय नाट्य साहित्य और रंगमंच की अमूल्य निधि

मल्लिका मुखर्जी

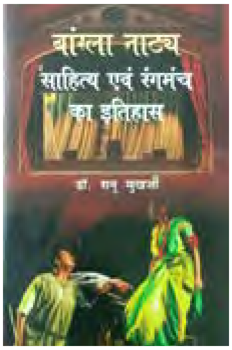

डॉ. रानू मुखर्जी

"बांग्ला नाट्य साहित्य एवं रंगमंच का इतिहास"

भारत में रंगमंच का इतिहास बहुत पुराना है। ऐसा माना जाता है कि नाट्यकला का विकास सर्वप्रथम भारत में ही हुआ। गीत, संगीत और नृत्य का प्रभाव हमारी प्राचीन संस्कृति में अधिक था, इसलिए कई विद्वान संगीत और नृत्य से नाटकों की उत्पत्ति मानते हैं। नाटकों का विकास कैसे भी हुआ हो, भारतीय साहित्य में नाटक लिखने की परंपरा संस्कृत के माध्यम से ही देश के सभी प्रदेशों को मिली। संस्कृत साहित्य में नाट्य ग्रंथ और उससे संबंधित अनेक शास्त्रीय ग्रंथ लिखे गए। भारत के हर प्रदेश में नाटक का एक जैसा विकास नहीं हुआ होगा, परंतु उनमें आपस में प्रभाव जरूर रहा है।

सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. रानू मुखर्जी की शानदार पुस्तक "बांग्ला नाट्य साहित्य एवं रंगमंच" भी भारत के अन्य प्रदेशों के नाट्य साहित्य को प्रभावित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कड़ी साबित होगी। इस पुस्तक की कथा बांग्ला नाटक के आरंभ की कथा से शुरू होती है। पुस्तक में शामिल सभी अध्याय न केवल बांग्ला नाटकों के इतिहास की उत्पत्ति और विकास को समझने में मदद करते हैं, बल्कि विदेशी नाट्य साहित्य की विस्तृत जानकारी भी देते हैं।

नाट्य साहित्य पर शोध करने वाले किसी भी शोधार्थी के लिए यह पुस्तक न केवल भारत के अन्य क्षेत्रों के नाट्य साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन में उपयोगी होगी, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय नाट्य साहित्य के अध्ययन में भी यह एक महत्वपूर्ण सामग्री सिद्ध होगी।

यह विषय महासागर जितना विशाल है। बचपन से ही नाटक के प्रति रुचि रहने के कारण ही रानू जी इस विषय के साथ सम्पूर्ण न्याय कर पाईं। मेरी भी नाट्य साहित्य और रंगमंच में रुचि रही है। गुजरात में रहकर मैंने अधिकांश गुजराती नाटकों में अभिनय किया। कुछ हिन्दी नाटक भी थे। महाश्वेता देवी के उपन्यास 'हज़ार चौरासी की माँ' के शांति चट्टोपाध्याय द्वारा किए गए बांग्ला नाट्य रूपांतरण का हिन्दी अनुवाद करने का अवसर मिला और कार्यालय के वार्षिकोत्सव में इस नाटक का मंचन हुआ जिसमें मैंने सुजाता का किरदार निभाया था।

बांग्ला नाट्य साहित्य एवं रंगमंच के इतिहास की विस्तृत जानकारी मुझे इस पुस्तक से मिली। नाटक की उत्पत्ति और विकास के साथ-साथ रंगमंच की विकास यात्रा का अद्भुत वर्णन इस पुस्तक में है। बांग्ला नाट्य साहित्य के इतिहास को तीन भागों में विभाजित किया है- अनुवाद युग, आदि युग, मध्य युग। आधुनिक युग की चर्चा का क्षेत्र अति विशाल होने के कारण उसकी चर्चा बाद में कभी करने का आश्वासन भी दिया है। इस पुस्तक के प्रत्येक अध्याय में उस समय रचे गए नाट्य साहित्य के बारे में विस्तार से लिखा गया है। एक अध्याय में प्रसिद्ध नाट्य विभूतियों का भी वर्णन किया गया है।

मेरे इस संक्षिप्त विवरण से भी रानू जी की अपार मेहनत का अंदाजा लगाया जा सकता है। बांग्ला नाट्य साहित्य का विकास वस्तुतः विगत सौ वर्षों में हुआ है। 19वीं सदी के मध्य में जब अंग्रेजी शिक्षित बंग वासियों का अंग्रेजी नाट्य साहित्य से परिचय हुआ तभी वे हमारे देश में स्थित दो नाट्य धाराओं के प्रति आकृष्ट हुए– एक था संस्कृत नाटकों की धारा और देशीय जात्रा की धारा। बांग्ला नाट्य साहित्य के प्रथम युग में अंग्रेजी तथा संस्कृत नाटक का नाटकों का बांग्ला में अनुवाद होता रहा और फिर धीरे-धीरे मौलिक नाटक लिखे जाने लगे। संस्कृत तथा अंग्रेजी नाटकों के अनुवाद से ही बांग्ला नाटकों का अभ्युदय हुआ। उनमें हरचन्द्र घोष, काली प्रसन्न सिंह तथा राम नारायण तर्करत्न ने प्रसिद्धि पाई।

आदि युग में, बाल्य विवाह, विधवा विवाह, बहु विवाह प्रथा, पत्नी की समस्या जैसे विषयों को लेकर अनेक सामाजिक नाटक लिखे गए। पौराणिक नाटक और प्रहसन भी लिखे गए। रामनारायण तर्करत्न तथा माइकेल मधुसूदन दत्त, दीनबंधु मित्र, मनोमोहन बसु, मीर मशर्रफ हुसैन इस युग के मुख्य नाट्यकार हैं, जिनके नाटकों के बारे में रानू जी ने विस्तार से लिखा है।

मध्य युग में ज्योतीन्द्रनाथ ठाकुर, किरणचंद्र बंदोपाध्याय, हरलाल राय, उपेन्द्र नाथ दास, उमेषचंद्र गुप्त, प्रमथ नाथ मित्र फिर बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय, शशधर तर्क चूड़ामणी, अक्षयचंद्र सरकार, अमृत लाल बसु आदि नाट्यकारों के नाटकों की चर्चा है।

1872 से गिरीश युग शुरू हुआ। गिरीश चंद्र घोष ने कृतिवासी रामायण को आधार बनाकर 'रावण वध',' सीतार वनवास', 'लक्ष्मण बर्जन', 'सीतार विवाह', 'रामेर बनवास' जैसे नाटक लिखे। उन्होंने 'प्रफुल्ल', 'बलिदान', 'गृहलक्ष्मी' जैसे सामाजिक नाटक भी लिखे। उनके ऐतिहासिक नाटकों में 'सिराजदौला' सर्वश्रेष्ठ है।

बीसवीं सदी के आरंभ में नाटकों कि दिशा पौराणिक जगत से ऐतिहासिक दिशा की ओर मुड़ी। बांग्ला समाज कभी संस्कार आंदोलन, कभी धर्म आंदोलन तो कभी स्वाधीनता आंदोलनों से गुजरने लगा। स्वाधीनता आंदोलन के समय भारत के अतीत के इतिहास को आधार बनाकर नाटकों की रचना होने लगी। बांग्ला नाटक के दो उद्देश्य रहे समाज संस्कार और स्वदेश चेतन। ऐसे नाटकों का पूर्ण विकास द्विजेंद्र लाल के नाटकों से आरंभ हुआ। फिर कवि, उपन्यासकार क्षीरोप्रसाद विद्याविनोद आए। उनका श्रेष्ठ नाटक है 'आलमगीर'।

रानू जी रवीन्द्रनाथ ठाकुर को बांग्ला नाट्य साहित्य के आधुनिक युग के सर्व प्रधान प्रतिनिधि मानती हैं। ठाकुर परिवार के नाटक के प्रति लगाव से मैं परिचित थी लेकिन एक नाट्यकार के रूप में उनके इस विशाल योगदान से मैं अपरिचित थी। उनके वहाँ नाट्य अनुष्ठान एक उत्सव के रूप में पालन किया जाता था। टैगोर ने अपनी नाट्य रचनाओं के माध्यम से सत्यम शिवम सुंदरम को स्वर देकर पूरे विश्व को अपने आगोश में ले लिया। शुरू में भले ही उनके नाटकों में शेक्सपियर का प्रभाव दिखता है लेकिन बाद में उनके नाट्य लेखन में मौलिकता दिखाई देती है। रानू दी लिखती हैं कि इस युग में कोई ऐसा सशक्त नाटककार नहीं था जिसे युग प्रवर्तक कहा जा सके। मैं भी इस बात से सहमत हूँ।

मुझे गुरुदेव रवीन्द्रनाथ के नाटक लेखन के कई पहलू मिले, जिनसे मैं अनजान थी। उन्होंने नाट्य रीति के सभी प्रकार के नियमों को नकार कर नाटक रचना आरंभ की। उन्होंने प्रचलित रंगमंच को ध्यान में रखकर नाटकों की रचना नहीं की है। वे अपने नाट्य रचनाओं को दृश्य काव्य के रूप में प्रस्तुत करने के पक्ष में नहीं थे। वे मानते थे कि निहायत मंचमुखी नाटक साहित्यिक अवदान प्रस्तुत करने में समर्थ नहीं होते हैं। संस्कार से संपूर्ण मुक्त होकर अपने नाटकों को सार्थक पाठ्य रूप देने में वे सफल भी हुए। बांग्ला साहित्य में सबसे उल्लेखनीय नाटक टैगोर के ही हैं। रानू जी ने टैगोर के नाटकों को गीतिनाट्य, काव्य नाट्य, नृत्य नाट्य, प्रहसन, सांकेतिक नाटक और सामाजिक नाटकों में विभाजित किया है।

पुस्तक के दूसरे भाग में नाटक और रंगमंच के बीच अंतर्संबंध के व्यापक क्षेत्र को शामिल किया गया है। खुले आसमान के नीचे खुले प्रांगण में खेले जाने वाले बंगाली जात्रा नाटक से शुरू करते हुए नाटक की विकास यात्रा को टैगोर के नाटक तक बहुत ही कुशलता से दर्शाया है।

बंगालियों में नाटक के प्रति प्रेम पागलपन की हद तक होता है, इस बात के समर्थन में कितनी बातें याद आ गई! बचपन में जब भी हम बंगाल का दौरा करते पापा हमें उस समय कहीं न कहीं चल रहे जात्रा दिखाने जरूर ले जाते। मुझे याद है कि जात्रा एक सादे मंच पर की जाती, जिसके चारों ओर दर्शक होते। सामूहिक गीत गायक और संगीतकार मंच पर अपने स्थान पर बैठ जाते। इस पर मंच संबंधी कोई आडम्बर न होता, मंच पर अभिनेता इतनी ऊँची आवाज़ में बोलते कि चारों ओर बैठे दर्शक उनकी आवाज़ सुन सकें। जात्रा नाटक की कहानी अधिकतर रामायण या महाभारत पर आधारित होती। इतना ही नहीं, गुजरात के उन गाँवों में जहाँ रेलवे स्टेशन पर पापा का पोस्टिंग होता, वे हमें नाटक, भवाई और

कठपुतली के खेल देखने भी ले जाते। ग्रामजनों के साथ-साथ हम भी घर से खाने की चीजें, पानी, बैठने के लिए दरी ले जाते।

बढ़ती जाती नाटक की जनप्रियता तथा चलचित्र के आगमन से कैसे जात्रा में नए मोड़ आए और विदेशियों के प्रभाव से कैसे बंगाल में थिएटर के गठन होते गए, इस बात को भी इस पुस्तक में विस्तार से बताया है। बांग्ला नाटक के जन्म के समय इसके साथ कोई रंगमंच नहीं था, लेकिन रानू जी की बहुत ही रसप्रद चर्चा जो मुझे लगी कि रंगमंच के साथ प्रत्यक्ष संपर्क ना रहने पर भी नाटक की रचना हो सकती है। आज रंगमंच के साथ नाटक का संपर्क गौण हो गया है। आधुनिक रीडिंग ड्रामा या लिटरली ड्रामा के साथ रंगमंच का कोई संपर्क नहीं है। इस प्रकार के अद्भुत नाटक रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने लिखे हैं। माइकल मधुसूदन दत्त को छोड़कर किसी ने भी मंच के निर्देशानुसार नाटक नहीं रचे।

गुजरात मेरी कर्मभूमि होने के कारण मुझे बांग्ला नाट्य साहित्य पढ़ने का अधिक अवसर नहीं मिला। पुस्तक के 'बांग्ला रंगमंच' विभाग का अंतिम अध्याय तैंतीस प्रसिद्ध नाट्य व्यक्तित्वों से संबंधित है। इनमें उन नाट्य व्यक्तित्वों का भी परिचय दिया गया है, जिन्होंने नाटककार होने के साथ-साथ कला के अन्य क्षेत्रों में भी महारत हासिल की थी। मेरे लिए यह रोचक जानकारी थी कि मनमोहन बसु जात्रा, कीर्तन, बाउल आदि पर संगीत की रचना करते थे। गिरीश चंद्र घोष अपने युग के सर्वश्रेष्ठ अभिनेता भी थे। अमृतलाल बसु एक अभिनेता, नाट्य परिचालक, मंच अध्यक्ष, मंच के मालिक एवं नाट्य कार थे। क्षेत्र मोहन गंगोपाध्याय नारी चरित्र के अभिनय में सर्वश्रेष्ठ थे। बेचन भट्टाचार्य एक नाटककार, अभिनेता तथा संगीतकार और नाट्य परिचालक भी थे। मनोज मित्र, ब्रात बसु नट- नाटककार के साथ-साथ निर्देशक भी थे।

रंगमंच में नए युग की शुरुआत करने वाले महान रंगकर्मी शंभू मित्र मेरे सुनीप मामा के मित्र थे। किशोरावस्था में एक बार कोलकाता के स्टूडियो में उनके निमंत्रण से एक फ़िल्म की शूटिंग देखने का अवसर मिला था।

संगीत नाटक अकादमी से पुरस्कृत नाट्यकार अजितेश बंदोपाध्याय के बारे में पढ़कर बहुत अच्छा लगा। स्वतंत्रता के बाद नाट्य क्षेत्र में अजितेश बंदोपाध्याय का नाम अन्यतम है। 1960 में उन्होंने "नांदिकार" नाट्य गोष्ठी की स्थापना की। यहाँ उन्होंने अनेक नाटकों का निर्देशन किया। अनेक पुरस्कारों से सम्मानित रूद्र प्रसाद सेनगुप्ता 'नांदिकार' नाट्य गोष्ठी के प्राण पुरुष थे। मेरा सौभाग्य रहा कि वर्ष 1989-90 में मुझे एक नाट्य महोत्सव में अहमदाबाद के 'जयशंकर सुंदरी हॉल' में रूद्र प्रसाद सेनगुप्ता निर्देशित नाटक 'शेष साक्षात्कार' देखने का अवसर मिला था।

उत्पल दत्त बांग्ला नाटकों के बेजोड़ अभिनेता थे यह तो पता था, लेकिन उत्तम कुमार को मैं एक बेहतरीन फ़िल्म अभिनेता के रूप में ही जानती थी। शुरुआत के दिनों में उन्होंने नाटकों में भी काम किया तथा बांग्ला फिल्म जगत के अभिनेता सौमित्र चट्टोपाध्याय, उत्तम कुमार, सावित्री चट्टोपाध्याय बेहतरीन नाट्य व्यक्तित्व भी थे। इस विशाल ग्रंथ में रानू जी ने नाट्य साहित्य से संबंधित सभी विषयों को समाहित करने का सार्थक प्रयास किया है।

विषय का हर अध्याय रानू जी का विश्लेषण संदर्भ, चिंतन, विषय की एकरूपता को बरकरार रखता है, इसलिए पढ़ते हुए पाठक की अभिरुचि बढ़ती जाती है। उनका विवेचन कौशल्य भी ध्यान आकर्षित करता है। संदर्भ सूची से ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि उनका अध्ययन कितना गहन है। विषय से संबंधित खोज में अनेक ग्रंथों के वाचन में उनकी निष्ठा, धैर्य, सूक्ष्मदर्शी का ही परिणाम है, जो हमें इतनी उत्कृष्ट किताब मिली। नाटकों के अध्ययन के किसी भी शोधार्थी के लिए यह पुस्तक बहुत ही उपयोगी साबित हो सकती है।

सौ वर्षों से अधिक की अवधि को समेटे हुए, सरल भाषा और रोचक वर्णनात्मक शैली में एक नेक उद्देश्य से लिखी गई यह पुस्तक हिन्दी साहित्य जगत में एक विशेष स्थान बनाएगी, इसमें कोई संदेह नहीं है।

लेखक : ''बांग्ला नाट्य साहित्य एवं रंगमंच का इतिहास'', प्रकाशक: नमन प्रकाशन, नई दिल्ली

समीक्षक : मल्लिका मुखर्जी, बहुभाषी लेखक एवं अनुवादक, अहमदाबाद, मो. 97129 21614

प्रचार-प्रसार एवं समीक्षार्थ नवीनतम प्रकाशन

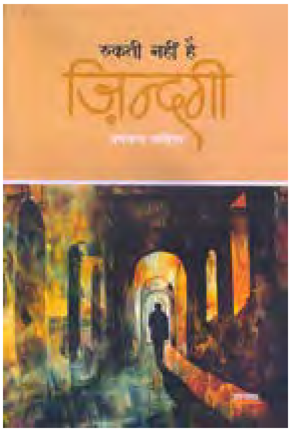

लघुकथा पुस्तक 'टूटती मर्यादा' की समीक्षा

स्त्री के मन में उतर कर लिखने वाली लेखिका सविता मिश्रा 'अक्षजा'

श्याम सुन्दर अग्रवाल

बीसवीं सदी में पुस्तकों व पत्रिकाओं को पढ़ कर ही नए लोग साहित्य-लेखन में प्रवेश करते थे। पत्रिका या पुस्तक प्रकाशित करना/करवाना सबके लिए संभव नहीं होता था। इसलिए लेखक की रचना संपादक के पैमानों पर खरी उतरने को बाद ही प्रकाशित हो पाती थी। लेकिन 21वीं सदी में आम लोगों की पहले इंटरनैट तक पहुँच बनी और लेखक अपना 'ब्लॉग' बना लिखने लगे। इससे लेखक की रचनाएँ विश्वभर के पाठकों तक पहुँचने लगीं। 'फेसबुक' के अवतरित होने पर 'ब्लॉग' कहीं पीछे छूट गया। 'फेसबुक'पर अनेक लेखकों की रचनाएँ एक ही स्थान पर देखी जा सकती थीं। 'फेसबुक'पर कई साहित्यक ग्रुप बने, इनमें लघुकथा विधा से संबंधित ग्रुप भी रहे। 'फेसबुक' पर सबकुछ व्यक्ति के अपने अधिकार में आ गया–लेखन, संपादन, प्रकाशन। ऐसे में लघुकथा विधा में बहुत बड़ी संख्या में नए लेखक/लेखिकाओं का उदय हुआ। गृहकार्यों में व्यस्त रहने वाली औरतें भी समय मिलते ही फेसबुक पर एक्टिव हो जाती रहीं। 'फेसबुक' लिखने की क्षमता रखने वाली स्त्रियों के लिए वरदान साबित हुआ। फेसबुक' से निकले रचनाकारों में अधिकांश लेखिकाएँ ही रहीं।

आगरा निवासी श्रीमती सविता मिश्रा 'अक्षजा' भी 'फेसबुक' से निकली लेखिका हैं। उन्होंने अपना लघुकथा लेखन फेसबुक से ही प्रारंभ किया। वे वर्ष 2014 में लघुकथा-लेखन में सक्रिय हुईं। उन्होंने लघुकथा-लेखन को आसान कार्य नहीं समझा। निरंतर परिश्रम किया व आगे बढ़ीं। जिन रचनाकारों ने लघुकथा लेखन को आसान कार्य समझा वे अधिक समय तक यहाँ टिक नहीं पाए, शीघ्र ही लेखन-क्षेत्र से बाहर हो गए। जिनके लेखन में निरंतरता बनी रही उनकी संख्या बहुत अधिक नहीं है। सविता मिश्रा जी पिछले आठ वर्षों से निरंतर लेखनी चला रही हैं। वर्ष 2019 में उनका प्रथम लघुकथा संग्रह 'रोशनी के अंकुर' प्रकाशित हुआ जो काफी चर्चित रहा। अपने स्वभाव की तरह ही 'अक्षजा' जी की लघुकथाओं की भाषा व शैली अन्य रचनाकारों से हटकर है। उन्होंने विभिन्न विषयों पर कलम चलाई है, लेकिन पारिवारिक रिश्तों व सामाजिक सरोकारों को लेकर लिखी गई उनकी लघुकथाएँ अधिक प्रभावित करती हैं। उनके दूसरे लघुकथा संग्रह 'टूटती मर्यादा' की रचनाओं के बारे में बेझिझक कहा जा सकता है कि ये लेखिका के पहले लघुकथा संग्रह की रचनाओं से बेहतर हैं। सविता मिश्रा 'अक्षजा' अपने लेखन में निरंतर सुधार ला रही हैं, यही एक श्रेष्ठ रचनाकार की पहचान है। मेरी ओर से 'अक्षजा' जी को उनके दूसरे लघुकथा संग्रह के लिए बहुत-बहुत बधाई एवँ हार्दिक शुभकामनाएँ।

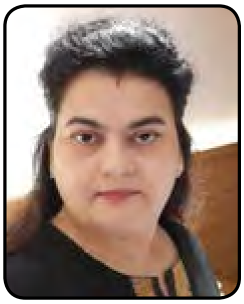
सविता मिश्रा 'अक्षजा'

पुस्तक – 'टूटती मर्यादा'

प्रकाशक-वनिका पब्लिकेशन

समीक्षक-श्याम सुन्दर अग्रवाल, कोटकपूरा (पंजाब)

पृष्ठ – 152 / **कीमत** – 250/- **विधा**- लघुकथा

लघुकथाकार-**सविता मिश्रा 'अक्षजा'**

जन्म : 1/6/73, प्रयागराज।

शिक्षा : इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक (हिंदी, राजनीति-शास्त्र, इतिहास)।

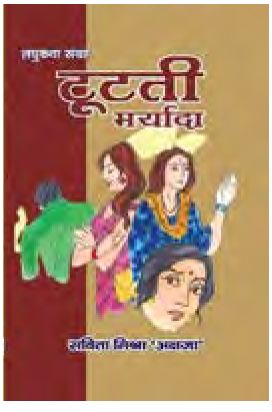

ब्लॉग : 'मन का गुबार' एवं 'दिल की गहराइयों से'।

ई-मेल : 2012.savita.mishra@gmail.com

मो. : 09411418621

पता : फ़्लैट नंबर -302, हिल हॉउस, खंदारी, आगरा

पिन कोड-282002

समीक्षा

व्यक्ति के अन्तर्मन के हर हर्फ को पढ़ती कहानियाँ

राजेश क़दम

कथाकार श्याम सुन्दर चौधरी उन खास कहानीकारों में है जिन्होने अपनी खास शैली और उसके प्रभाव को अपने चार दशक से भी ज़्यादा के लेखन काल में जरा भी कम नहीं दिया है। निःसन्देह इस दौरान तमाम तरह के सामाजिक और मानसिक अवरोधों का सामना भी हर किसी को करना होता ही है! जिससे किसी भी कला या विद्या से जुड़ा व्यक्ति असंपृक्त नहीं रह सकता। फिर, चाहें वो कथाकार ही क्यों न हो। सतत् सृजन का श्याम सुन्दर चौधरी का सिलसिला जारी है। इसी कड़ी में उनका 'मिस मुखर्जी' नाम से पन्द्रह कहानियों का नया संग्रह हर्ष पब्लिकेशंस दिल्ली से छपकर आया है।

संग्रह की जो खास बात है वह ये कि इसमें कथाकार ने अपने पूरे रचनाकाल की अवधि में से अपनी 2010 तक की स्थापित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित चुनिंदा कहानियों को संग्रह मे स्थान दिया है। लेखक का सफर और ट्रेनों के साथ खास और दिली जुड़ाव रहा है।

संयोग से संग्रह में चार कहानियों की घटनायें या पात्र ट्रेनों से सम्बन्धित है। जिनमें से पहली कहानी है 'कोहरा'। कहानी में 'कोहरा' दरअसल नायक की आँखों उन-ओ-दिमाग में छाये अभिजात्य की सोच की तिलिफ के टूटने की कहानी है। चादर से बाहर पैर निकालने पर सबका जो हश्र होता है, वही कहानी में नायक आरम्भ का भी होता है। अजीत आनंद नाराजगी की सजा के फलस्वरूप नायक को तबादले का दंश झेलना पड़ता है। दूसरी कहानी 'लर्न एटीकेट' में कान्वेंट शिक्षित सहयात्री लड़की की परेशानी मुक्त/यात्रा की जिम्मेदारी का भार उठा रहे नायक के कड़वे अनुभव पर आधारित है। कहानी का मूल स्वर अंग्रेजी माध्यम से उच्च शिक्षा अभी हिन्दी मीडियम के बीच की बढ़ती दूरी अभी सामान्य शिष्टाचार की सीख पर केन्द्रित है। कुछ घन्टे भी जीवन भर के लिये कितने आत्मीय रिश्तों की नींव रख जाते है यह बात बेहतरीन और मार्मिक ढंग से देखी और महसूस की जा सकती है 'अपना-दुःख' नायक कहानी में। कहानी में नायक के अलावा निगम जी और उनकी सहृदय पत्नी का किरदार समाज के लिये एक उदाहरण की तरह आया है सहज-सरल और मानवता से भरे रिश्तों की बड़ी ही कोमल कहानी है। इसी तरह से ट्रेन के सफर की आखिरी कहानी है-'ऐसा था उनका मिलना'। नायक के अन्दर का समग्र बौद्धिक अहं, सौन्दर्य बोध पर्सनैलिटी और आकर्षण का बिखराव किस तरह से चौंकाता है उसे इन पंक्तियों में साफ देखा जा सकता है-'वहीं स्त्री, वह सुन्दर स्त्री अन्नपूर्णा-सी मुस्कान के साथ पेपर-प्लेट में पूड़ी, दो तरह की सब्जी और अचार लिये मेरे सामने खड़ी थी।' कैसे सम्मोहित होकर नायक इस 'अप्रत्याशित प्रसाद' को ग्रहण करता है। गलत सोच और दृष्टि पर कुठाराघात करती अद्भुत और उल्लेखनीय कहानी है।

'बदलने क्षण' संग्रह की अच्छी कहानी है। राजनीतिक सरंक्षण में परवान चढ़ती कॉलेज की गुण्डागरी अभी विजय की कारगुजारियों का हू-ब-हू चित्रण है। कहानी में। बहुत छोटे से कथ्य और हृदय परिवर्तन की बेहतरीन कहानी को पढ़ते-पढ़ते पाठक शर्तियाँ अपने कॉलेज के दिनों को ताजा कर सकेंगें। 'मिस मुखर्जी' एक ऐसी लड़की की त्रासद कहानी जिसके लिये अपनी छोड़कर घर में सभी की खुशियाँ मायने रखती है और भाई-बहन आदि की इन्हीं खुशियों को सहेजने-संवारने में ही वह स्त्रीत्व हार जाती है। बदनाम होती है, उपेक्षित अभी अन्ततः पिक्षिप्त हो जाती है। इसी तरह से 'किसे-किसे दोष दोगे ? शायद यह बारात ा चरित्र ही बन गया है।' ये वाक्य किसी मजबूर और परम्परा के आगे विवश लड़की वालों के दरवाजे पर पहुँचने वाले बारातियों की फूहड़ता उद्दण्डता को लेकर। लड़के वालों के साथ ही लड़की वालों के अशोभनीय व्यवहार और परम्परावादी सोच को लेकर लेखक यहाँ पर बहुत कुछ सोचने के लिये भी विवश करता है।

'कटघरा' और 'एक सैल्यूर आगंतुक के नाम' में लेखक ने इंसान के लिये इंसानियत को ही सभी धर्मो से ऊपर बताया है। 'कटघरा' दंगे की वीभत्स विभीषिका को रेखांकित करती एक बच्चे के प्रश्न-अंकल...आप...आप...पापा और... हम सबको ...मार डालेंगे ?' या फिर, ' अंकल, यह कौम का मतलब क्या

होता है, बताइये ? ' समूचे मस्तिष्क को हिलाकर रख देते हैं। वही 'एक सैल्यूर आगंतुक के नाम' एक दिलचस्प और अप्रत्याशित कथ्य की पठनीयता के शीर्ष को छूती हुयी कहानी है जो निःसन्देह आज के परिवेश में कतई हज़म नहीं होती। कहानी में सबसे बड़ा संदेश है कि धर्म इंसान के लिये ना कि इंसान धर्म के लिये। भले अतिथि दुश्मन के भेष में हो किन्तु अतिथि देवो भव के भाव को चरितार्थ करती खूबसूरत कहानी है।

संग्रह की एक और कहानी है 'समर्पित ख्वाहिशों वाली लड़की'...... नेपथ्य में दंगे की काली छाया है जिसमें अपने माँ-बाप खो चुकी मुस्लिम लड़की के राधा बनने और अहृदय हिन्दू परिवार द्वारा उसे अपनाये जाने की कहानी। कहानी में सहजता इतनी जबरदस्त है कि पाठक आगे रहता है और कहानी पीछे-पीछे चलती है। कहानी का संदेश भी स्पष्ट है। 'मेरा अपना-बीमार कोट' प्रतीकात्मक और व्यंग्य शैली की सिद्धांत और आदर्शवाद की बड़ी रोचक कहानी है।

संग्रह की बाकी कहानियों में 'हाशिये में है' जिसमें स्वार्थी और अवसर-वादी घोष परिवार से अक्सर ही छले जाने वाले नरेन्द्र बाबू की पीड़ा पाठकों को द्रवित करती है। मिसेज घोष का आपसी व्यवहार व शिष्टाचार का नज़रिया कोमल हृदय साहित्यप्रेमी नरेन्द्र बाबू का अन्तर्मन उधेड़कर रख देता है। 'विरासत' में पिता की नकारात्म छवि से जूझता और शर्मिन्दा होता बेटा है। दोनों के व्यवहार में परस्पर विरोधाभास जिन कारणों से पिता के हृदय से, उनके स्वभाव में इंसानियत के मूलभूत तत्वों का अभाव हो जाता है।

'शिलान्यास' दुर्घटना से मिले सबक के बाद उपचार कूटने वाले परिवार के अपनत्व भरे व्यवहार से हृदय परिवर्तन की बहुत ही संवेदनशील कहानी है। संग्रह की अन्तिम कहानी है, सम्बन्ध। एक नाजुक रिश्ते के बेहद नाजुक पल की अन्र्तकथा है। पति के आकस्मिक निधन से उत्पन्न कठिन परिस्थितियों में बच्चों को संभालने वाली श्रद्धा अन्ततः दीनानाथ के सहयोग की आँचच में अपने शरीर की आहूति दे बैठती है। कहानी के अन्त में श्रद्धा एक प्रश्न के कटघरे में खुद को कैद पाती है जहाँ वह गलत नहीं है तो सही भी नहीं है।

संग्रह का आद्योपांत पढ़ने के बाद पाठक का चकित होना स्वाभाविक है, कि कथाकार श्याम सुन्दर चौधरी की दृष्टि और सोच कितनी स्पष्ट और मुखर है! कहानी में अपने पात्रों के परिवेश, परिस्थिति, मनोभाव, उनके सुख दुःख का बड़े ही मनोवैज्ञानिक चित्रण इन कहानियों में मिलता है। लेखक के अन्दर ग़ज़ब का सौन्दर्यबोध है। उनके स्त्री पात्र सुन्दर आकर्षक नैन-नक़्श के साथ ही अपनी मर्यादाओं का भी खास ध्यान रखते है। श्याम सुन्दर चौधरी की कहानियों में पुरूष पात्र भी सममित अच्छी सोच और विचार के है जो अपने आचरण से समाज के नजरिये की वो व्याख्या पेश करते है जिनका आज के दौर में नितांत अमाक-सा होता जा रहा है। निश्चय ही संग्रह पठनीय, सराहनीय और संग्रहणीय है।

पुस्तक- मिस मुखर्जी (कहानी संग्रह)
लेखक-श्याम सुन्दर चौधरी
प्रकाशक-हर्ष पब्लिकेशंस
दिल्ली-110032

समीक्षक : **राजेश क़दम**
42/6, विजय नगर,
निकट-आर्य समाज मन्दिर,
कानपुर-208005 (उ.प्र.)
मो.- 08953751503
इमेल-rajeshkumarsharma2015@gmail.com

प्रचार-प्रसार एवं समीक्षार्थ नवीनतम प्रकाशन

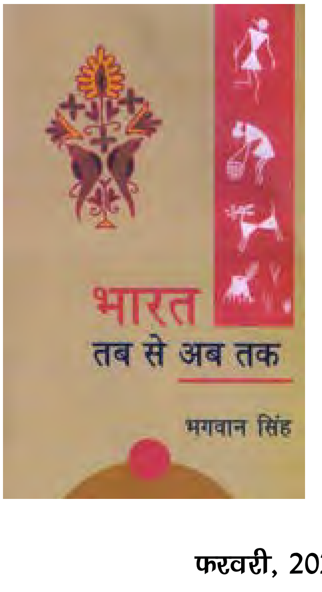

समीक्षा

युवा पीढ़ी का साहित्य के प्रति विमुख होना चिंताजनक

डा. अजय शर्मा

पंजाब के शिरोमणी साहित्यकार व प्रसिद्ध उपन्यासकार डॉ. अजय शर्मा ने इस बात पर चिंता जताई है कि पंजाब में हिंदी साहित्य को पढ़ने वालों की गिनती दिन प्रतिदिन कम होती जा रही है,जो साहित्य के भविष्य के लिए बहुत बड़ा खतरा है। वे आज प्रसिद्ध साहित्यकार एवं दोआबा साहित्य एवं कला अकादमी के अध्यक्ष डॉ. जवाहर धीर के निवास पर आए थे। पंजाब में युवा पीढ़ी में साहित्य के प्रति रुचि का न होना और नये साहित्यकारों की निरंतर होती जा रही कमी के कारण भविष्य के खतरे को लेकर डॉ. धीर द्वारा पूछे गए सवाल के उत्तर में उन्होंने कहा कि सच्चाई यही है कि हमारी पीढ़ी के कारण ही पंजाब में साहित्य रचा जा रहा है। हमारी युवा पीढ़ी तो सोशल मीडिया तक ही सीमित होकर रह गई है। सच यह है कि सोशल मीडिया ने पंजाब ही नहीं,अन्य राज्यों में भी साहित्य को धीरे-धीरे खत्म करने का काम किया है। आज की स्थिति यह है कि अगर कुछ लोग साहित्य रचते भी हैं तो किसी से कुछ सीखना नहीं चाहते और तुरंत पुस्तक छपवाना चाहते हैं। पुस्तक के छपते ही वे स्वयं को 'वरिष्ठ या नामवर' लेखक समझने लगते हैं।

डा.धीर के यह पूछने पर कि अगर हम अपने से दो पीढ़ी पहले के लेखकों की बात करें तो उन लेखकों में क्या विशेषता थी जो उन्हें आज भी पढ़ा जाता है और याद किया जाता है। डॉ. अजय शर्मा ने कहा कि अगर पुराने समय के लेखकों मुंशी प्रेमचंद, नागार्जुन, उपेन्द्र नाथ अश्क, मैथिली शरण गुप्त, महादेवी वर्मा या उस पीढ़ी के लेखकों को इसलिए याद किया जाता है कि उन्होंने उस दौर में अच्छा लिखा। पीढ़ियां सिर्फ लिखने वालों को याद नहीं करतीं बल्कि अच्छा लिखने वालों को याद करती हैं।

डॉ. जवाहर धीर ने चर्चा को आगे बढ़ाते हुए कहा कि आपके अब तक सत्रह उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं, और इन में अधिकतर उपन्यास उस समय की घटनाओं पर आधारित हैं। जैसे बसरा की गलियाँ, शहर पर लगी आँखें, कागद कलम न लिखन हार, कोरोना काल पर कमरा नं 909, ख़ारकीव के खंडहर और अब नया उपन्यास' खेले सगल जगत', जो राम मंदिर के निर्माण के विषय पर आधारित है। इनमें से बहुत से उपन्यास विभिन्न विश्वविद्यालयों के कोर्सेज में पढ़ाए जा रहे हैं। बहुतों पर एम.फिल या डाक्ट्रेट हो चुकी हैं।

बातचीत के अंत में डॉ. अजय शर्मा ने अपना नव प्रकाशित उपन्यास 'खेले सगल जगत' डॉ. जवाहर धीर को भेंट करते हुए आशा व्यक्त की कि यह उपन्यास भी पहले उपन्यासों की तरह दोआबा साहित्य एवं कला अकादमी के सदस्यों को पसंद आएगा। उन्होंने अकादमी के संरक्षक टी.डी. चावला, डॉ. यश चोपड़ा, रविन्द्र सिंह चोट, दिलीप कुमार पाण्डेय और अन्यों को भी मिले सहयोग को स्मरण किया। –**फगवाड़ा**

चित्र: दोआबा साहित्य अकादमी के अध्यक्ष डा. जवाहर धीर को उपन्यास भेंट करते हुए डा.अजय शर्मा।

रिपोर्ट-कविता पन्त

महिला काव्य मंच (ओल्ड अहमदाबाद इकाई), अध्यक्ष- कुमुद वर्मा द्वारा साहित्यिक परंपरा का नए वर्ष में साहित्यिक लोहड़ी पर्व द्वारा आगाज़

गुड़-तिल की मिठास लिए पावन पर्व लोहड़ी की भावभीनी संध्या, 13 जनवरी 2025 की गोधुलि बेला में साहित्यिक संध्या के रूप में तब और ज़्यादा खिल उठी, जब महिला काव्य मंच (ओल्ड) की अध्यक्षा सुश्री कुमुद वर्मा जी के द्वारा आई. आई. एम., अहमदाबाद के प्रांगण में स्थित उनके निवास स्थान पर मासिक काव्य गोष्ठी एवं पुस्तक विमोचन के उपरान्त प्रीति भोज और संगीतमय लोहड़ी पर्व का सुन्दर आयोजन किया गया।

अंतर्राष्ट्रीय महिला काव्य मंच के संस्थापक आदरणीय श्री नरेश नाज़ जी के सानिध्य में यह मंच कई वर्षों से निरंतर ऊर्ध्वमुखी हो गतिमान रहा है। काव्य गोष्ठी का शुभारम्भ मंच की सदस्या सुश्री कविता पन्त जी के द्वारा माँ वीणापाणि की वंदना ‘ जय-जय हे भगवती सुर भारती....‘ के गायन से किया गया। इसके उपरान्त मंच पर उपस्थित तीन विशिष्ट आदरणीय मुख्य अतिथियों (सुश्री मधु प्रसाद जी, श्री संजय वर्मा जी और सुश्री दीपशिखा जी) का स्वागत पुष्प और दुशाला भेंट करके किया गया। बुद्धिजीवी लेखिकाओं और कवयित्रियों की उपस्थिति ने वातावरण को पूर्ण सकारात्मक उल्लास से सराबोर कर दिया। काव्य गोष्ठी के दौरान सञ्चालन के रथ की कमान सुश्री ज्योति अमीन जी ने बड़ी कुशलता और धैर्य से सम्भाले रखी।

काव्य पाठ का आरम्भ सुश्री मुक्ता मेहता जी के द्वारा इन पंक्तियों के साथ किया गया : मूँगफली दी खुशबू ते गुड़ दी मिठास...। इसके बाद सुश्री हेमिषा शाह जी ने अपनी रचना प्रस्तुत की : ख्वाहिशें इतनी मूँद रखी हैं कि नींद मुकम्मल नहीं होती...। तत्पश्चात सुश्री कविता पन्त जी ने नए दौर की महिलाओं के बारे में अपनी कविता की इन पंक्तियों में अपनी बात रखी : ज़माने भर के दर्दो गम गले अब ना लगाएँगी.. / ये चौखट लाँघ अम्बर पे ध्वजा फहराके आएँगी। इसके बाद सुश्री ममता जी ने अपनी भावपूर्ण काव्य पंक्तियाँ प्रस्तुत कीं : हर शाम जागती है एक ख्वाहिश / अगली शाम तक के लिए ...। फिर सुश्री सीमा शर्मा जी ने अपने कोमल भाव इन काव्य पंक्तियों में व्यक्त किए : स्कूल के दिन के जैसे सपनों का संसार ..। तत्पश्चात सुश्री जानकी पालीवाल जी ने बेहद संवेदनशील पंक्तियों में अपने मन के भाव प्रस्तुत किए : **जी हाँ, वो साँस तो लेती है / मगर धीरे-धीरे ...। इसके बाद सुश्री मीरा जगनानी जी ने अपनी स्मृतियों को इन पंक्तियों में उकेरा : मेरे कमरे की खिड़की के सामने / तेरे कमरे की खिड़की खुलती थी। तत्पश्चात सुश्री मधु प्रसाद जी ने मीठा-सा गुनगुनाया : मन वासंती पढ़ रहा पाती तुम्हारी / गुनगुनाती धूप में यादों की पारी...।**

काव्य गोष्ठी के दौरान आदरणीय श्री नरेश नाज़ जी ने ऑनलाइन, कार्यक्रम से जुड़कर कार्यक्रम में उपस्थित लेखिकाओं और कवयित्रियों को आशीर्वचन और शुभकामनाएँ अर्पित कीं। उन्होंने काव्यगोष्ठी का हिस्सा बनते हुए अपने एक गीत की सुन्दर पंक्तियाँ इस तरह प्रस्तुत कीं : रौशन जो हुई शम्मा / हर ओर उजाले हैं / घर में भी उजाला है / दिल में भी उजाले हैं ... । इसके बाद सुश्री ज्योति अमीन जी ने अपनी काव्य पंक्तियाँ पेश कीं : मेरा वजूद जैसे एक कलम की डाल / जिसे सब फल पाने की आशा से लगाते हैं... ।

सुश्री ज्योति अमीन जी के सञ्चालन को यहीं विराम देते हुए कार्यक्रम के अगले पड़ाव, पुस्तक विमोचन के लिए सुश्री कुमुद जी ने अपनी इन काव्य पंक्तियों के साथ अपने हाथों में सञ्चालन की बागडोर संभाली : दिन यूँ ही ना ढल जाने देना / आज के गम को दफनाकर / नई उमंग से चल देना।

पुस्तक विमोचन के कार्यक्रम में तीन महिला साहित्यकारों (सुश्री मधु प्रसाद जी, सुश्री मल्लिका मुखर्जी जी और सुश्री कविता पन्त जी) की कुल मिलाकर पाँच पुस्तकों का विमोचन मंच की मुख्य अतिथि (अहमदाबाद आकाशवाणी केंद्र की कार्यक्रम प्रसारिका) आदरणीय सुश्री दीपशिखा जी के द्वारा किया गया।

सुश्री मधु प्रसाद जी की तीन पुस्तकें हैं – झुरमुट से झाँकते हुए (हायकु संग्रह), एक शब्द- यात्रा बहुरंगी (गद्य संग्रह) और क्यों नहीं रुकते तनिक वसंत (काव्य संग्रह), जिनके विषय में उन्होंने स्वयं खुलकर बताया और पुस्तक के कुछ अंश भी पढ़े । सुश्री मल्लिका मुखर्जी जी की पुस्तक का नाम है-लिफाफों में सिमटे एहसास (पत्र संग्रह), जिसकी व्याख्या सुश्री नीता व्यास जी ने अपने सुन्दर शब्दों में की। सुश्री कविता पन्त जी की पुस्तक का नाम है – रंगोली आसमां पर (उपन्यास) । सुश्री ममता जी ने भावभीने अंदाज़ में अपने समक्ष बैठे लोगों को इस उपन्यास से परिचित करवाया।

विमोचन के कार्यक्रम का समापन वहाँ उपस्थित मान्य गणों की करतल ध्वनि की ज़ोरदार गूँज के साथ हुआ। सुश्री कुमुद जी और उनके पति श्री संजय वर्मा जी ने पूरे उत्साह के साथ समर्पित भाव से कार्यक्रम को आरम्भ से अंत तक भव्यता और रोचकता प्रदान की, जो वास्तव में सबका दिल छू गयी।

साहित्यिक कार्यक्रम और शानदार प्रीति भोज के बाद वहाँ उपस्थित सभी लोग लोहड़ी की उमंग से लबरेज़ वातावरण में आनंद बिखराती सुर-लहरियों में डुबकी लगाने लगे । अग्नि के इर्द-गिर्द घेरे में घूमते-झूमते लोगों ने साहित्यिक गंगा में डुबकी लगाने के बाद मूँगफली, रेवड़ी और मक्कई की फुल्लियों का आनंद उठाते हुए लोहड़ी का जश्न मनाया और इस तरह मना लिया गया साहित्यिक लोहड़ी पर्व।

महिला काव्य मंच के संस्थापक आदरणीय नरेश नाज़ की ऑनलाइन उपस्थिति रही।

पूरा कार्यक्रम फेस बुक पर लाइव था। इसे सैकड़ों साहित्य प्रेमियों द्वारा देखा गया है।

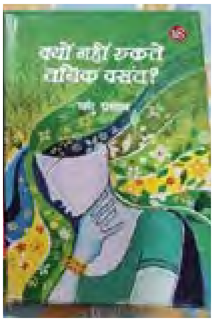

पहला संतोष श्रीवास्तव कथा सम्मान प्रभा पंत को

मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति एवं हिंदी भवन न्यास द्वारा भोपाल में 25 दिसंबर 2024 को आयोजित 'शरद व्याख्यान माला तथा सम्मान समारोह' के अंतर्गत पहला संतोष श्रीवास्तव कथा सम्मान हल्द्वानी, उत्तराखण्ड की कथाकार, प्रोफेसर प्रभा पंत को उनके कथा संग्रह 'फांस' के लिए प्रदान किया गया। आपकी अनुपस्थिति में यह पुरस्कार आपकी पुत्री डॉ. यशस्वी नंदा द्वारा ग्रहण किया गया।

पुरस्कार के अंतर्गत 21 हजार की सम्मान राशि, शॉल एवं प्रतीक चिन्ह कार्यक्रम के मुख्य अतिथि उच्चशिक्षा मंत्री इंद्रसिंह परमार के कर कमलों द्वारा भेंट किया गया।

इस अवसर पर संस्था द्वारा शैलेश मटियानी कथा सम्मान शीला मिश्रा, भोपाल, सुरेशचन्द्र शुक्ल 'चन्द्र' नाट्य सम्मान जयंत शंकर देशमुख, मुंबई, डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय स्मृति आलोचना सम्मान के. वनजा, कोच्ची, शंकरशरण लाल बत्ता पौराणिक सम्मान मोहन तिवारी आनंद, भोपाल, संतोष बत्ता स्मृति सम्मान इंदिरा दाँगी, भोपाल भी सम्मानित किए गए।

समारोह में राजधानी भोपाल सहित मध्य प्रदेश के विभिन्न शहरों से बड़ी संख्या में साहित्यकारों पत्रकारों ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई।

प्रस्तुति : दिनेश सिन्हा

सम्मानीय सम्पादक महोदय,

कृपया अपने पत्र / पत्रिका में निम्नलिखित विज्ञप्ति प्रकाशित करने का कष्ट करें ।

सधन्यवाद

कमलेश अवस्थी

आलोचना के लिए 'देवीशंकर अवस्थी स्मृति सम्मान'

प्रेस विज्ञप्ति

हिन्दी में साहित्यिक आलोचना की संस्कृति को प्रोत्साहित करने के लिए 45 वर्ष की आयु सीमा में आने वाले किसी युवा आलोचक को उसकी उत्कृष्ट आलोचनात्मक कृति को पुरस्कृत करने के अभिप्राय से प्रति वर्ष 'देवीशंकर अवस्थी स्मृति सम्मान' प्रदान किया जाता है । इसकी स्थापना वर्ष 1995 में हुई थी । अब तक यह सम्मान क्रमशः सर्वश्री मदन सोनी, पुरुषोत्तम अग्रवाल, विजय कुमार, सुरेश शर्मा, शंभुनाथ, वीरेन्द्र यादव,अजय तिवारी, पंकज चतुर्वेदी, अरविन्द त्रिपाठी, कृष्णमोहन, अनिल त्रिपाठी, ज्योतिष जोशी, प्रणयकृष्ण, प्रमिला के. पी., संजीव कुमार, जितेन्द्र श्रीवास्तव, प्रियम अंकित, विनोद तिवारी, जीतेन्द्र गुप्ता, वैभव सिंह, पंकज पराशर, अमिताभ राय, मृत्युंजय पाण्डेय, राहुल सिंह, आशुतोष भारद्वाज,अच्युतानंद मिश्र, सुजाता और निशांत को मिल चुका है। वर्ष 1999 एक अपवाद है, क्योंकि किसी कृति को सम्मान के योग्य पाया नहीं जा सका था।

निर्धारित संहिता के अनुसार प्रत्येक तीन वर्ष पर इस सम्मान की पाँच सदस्यीय निर्णायक-समिति परिवर्तित की जाती है। अब तक छः समितियाँ अपना कार्यकाल सम्पन्न कर चुकी हैं जिसके सदस्य क्रमशः सर्वश्री निर्मल वर्मा, कुँवरनारायण, श्रीलाल शुक्ल, नेमिचन्द्र जैन,अशोक वाजपेयी, पी.सी.जोशी, नित्यानंद तिवारी, मैनेजर पाण्डेय, कृष्ण कुमार, अजित कुमार, अशोक वाजपेयी,कृष्णा सोबती, विश्वनाथ त्रिपाठी, शिवकुमार मिश्र, मंगलेश डबराल,अशोक वाजपेयी,नामवर सिंह, केदारनाथ सिंह, विजयमोहन सिंह, विष्णु खरे, एवं उदय प्रकाश अशोक वाजपेयी, कृष्णा सोबती, विश्वनाथ त्रिपाठी, चन्द्रकान्त देवताले, मंगलेश डबराल, राजेन्द्र यादव, अजित कुमार, नित्यानन्द तिवारी, अर्चना वर्मा, नंद किशोर आचार्य, राजेन्द्र कुमार, अशोक वाजपेयी रहे। नवगठित समिति के सदस्य हैं - श्रीमती मृदुला गर्ग, डॉ. कमलेश अवस्थी, श्री अशोक वाजपेयी, श्री सुधीर चन्द्र, और श्री पुरुषोत्तम अग्रवाल।

आलोचना के लिए 'देवीशंकर अवस्थी सम्मान' ः नियमावली

1. **नियामिका -** डॉ. (श्रीमती) कमलेश अवस्थी।
2. निर्णायक-समिति का कार्यकाल - तीन वर्ष।
3. यह सम्मान प्रतिवर्ष देवीशंकर अवस्थी के जन्म दिन पर 05 अप्रैल को प्रदान किया जाता है।
4. सम्मान राशि रू. 25000.00 (पच्चीस हजार रुपये) मात्र है। साथ में प्रतीक चिन्ह् और प्रशास्ति पत्र भी जो निर्णायक-समिति के विवेक और सौजन्य से तैयार किया जाता है।
5. यह सम्मान 45 वर्ष की आयु-सीमा में आने वाले युवा आलोचक को दिया जाता है।
6. सम्मान का आधार उत्कृष्टता, प्रासंगिकता, वैचारिक क्षमता, जिम्मेदारी और विश्लेषण की सामर्थ्य माना जाता है।
7. सम्मान किसी प्रकाशित आलोचनात्मक कृति, लम्बे निबन्ध अथवा पुस्तक समीक्षा पर ही दिया जायेगा।
8. सम्मान के लिए पुस्तक अथवा निबन्ध का पिछले तीन वर्षो (जनवरी 2021से 31 दिसम्बर 2024) तक की अवधि में प्रकाशित होना अनिवार्य है । भविष्य में यह क्रम नियमानुसार बना रहेगा।
9. निर्णायक-समिति की बैठक प्रत्येक वर्ष संभावित तौर पर दो बार क्रमशः जनवरी और फरवरी के बीच की जाती है।
10. सम्मानित निर्णायकों से आग्रह होता है कि सम्मान हेतु सुयोग्यतम युवा आलोचक के चयन के सिलसिले में वर्ष पर्यन्त आपस में सामंजस्य, सहयोग और विचार-विनियम की प्रक्रिया बनाए रखें।
11. उपर्युक्त नियमों के अन्तर्गत आने वाले युवा आलोचकों से आग्रह किया जा रहा है कि "देवीशंकर अवस्थी स्मृति सम्मान" हेतु आलोचना की पुस्तक, पुस्तकें अथवा कोई लम्बे निबन्ध की तीन-तीन प्रतियाँ (शेष प्रतियाँ "देवीशंकर अवस्थी स्मृति सम्मान समिति" स्वयं मंगा लेगी) निर्णायक समिति के संयोजक के पते पर 22 फरवरी 2025 तक विचारार्थ भेज दें। केवल विशेष परिस्थियों में इसे 15मार्च 2025 तक माना जा सकता है। आने वाले वर्षों में भी यही प्रक्रिया बनी रहेगी। किसी अन्य जानकारी के लिए सम्मान समिति से संपर्क किया जा सकता है।

देवीशंकर अवस्थी स्मृति सम्मान समिति,
अनुराग अवस्थी, 1064, सेक्टर - 17 बी
इफको कालोनी, गुड़गाँव (हरियाणा)
मो0 नं0 - 09818308484
8 जनवरी, 2025

डॉ. कमलेश अवस्थी,
संयोजक,
श्याम सिंधु, 2/346 ए,
आजाद नगर, कानपुर - 208002
मोबा0 नं0- 09451017123

वर्ष 2024 के लिए शिवना प्रकाशन के प्रतिष्ठित सम्मानों की घोषणा

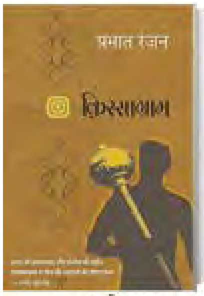

पुस्तक - क़िस्साग्राम

प्रभात रंजन

पुस्तक - वांग छी

मनीष वैद्य

पुस्तक - दण्ड से न्याय तक

प्रवीण कक्कड़

'अंतर्राष्ट्रीय शिवना सम्मान' संयुक्त रूप से प्रभात रंजन तथा मनीष वैद्य को, 'शिवना कृति सम्मान' प्रवीण कक्कड़ को शिवना प्रकाशन द्वारा दिए जाने वाले प्रतिष्ठित सम्मानों की घोषणा कर दी गयी है। शिवना प्रकाशन के ऑनलाइन आयोजन में वर्ष 2024 के लिए यह सम्मान दिये जाने की घोषणा की गयी है।

शिवना सम्मानों के लिए बनायी गयी चयन समिति के संयोजक, पत्रकार तथा लेखक आकाश माथुर ने जानकारी देते हुए बताया कि शिवना प्रकाशन द्वारा दो सम्मान प्रदान किये जाते हैं- एक 'अंतर्राष्ट्रीय शिवना सम्मान' जो वर्ष भर में सभी प्रकाशनों द्वारा प्रकाशित साहित्य की सभी विधाओं की पुस्तकों में से निर्णायकों द्वारा चयनित एक पुस्तक को प्रदान किया जाता है तथा दूसरा 'शिवना कृति सम्मान' जो वर्ष भर में शिवना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों में गुणवत्ता तथा विक्रय के सम्मिलित आधार पर एक पुस्तक को प्रदान किया जाता है। वर्ष 2024 के लिए इन सम्मानों की घोषणा कथाकार, उपन्यासकार पंकज सुबीर ने ऑनलाइन की। 'अंतर्राष्ट्रीय शिवना सम्मान' राजपाल एंड संस प्रकाशन से प्रकाशित उपन्यास 'क़िस्साग्राम' के लिए प्रभात रंजन तथा सेतु प्रकाशन से प्रकाशित कहानी संग्रह 'वांग छी' के लिए मनीष वैद्य को संयुक्त रूप से प्रदान किया जायेगा। 'शिवना कृति सम्मान' अकादमिक पुस्तक 'दण्ड से न्याय तक' के लिए लेखक प्रवीण कक्कड़ को प्रदान किया जायेगा। निर्णायक मंडल में अमेरिका निवासी वरिष्ठ लेखक सुधा ओम ढींगरा तथा राष्ट्रपति स्वर्ण कमल सम्मान से सम्मानित लेखक यतीन्द्र मिश्र शामिल थे। आकाश माथुर ने बताया कि शीघ्र ही एक गरिमामय सम्मान समारोह में इन सम्मानित रचनाकारों तथा पूर्व में घोषित नवलेखन पुरस्कार के लेखकों रश्मि कुलश्रेष्ठ तथा शुभ्रा ओझा को सम्मान राशि, शॉल, तथा स्मृति चिह्न प्रदान कर यह सम्मान प्रदान किये जायेंगे।

आकाश माथुर
चयन समिति संयोजक
शिवना सम्मान
मोबाइल-7000373096
व्हाट्सएप-8817222209

शहरयार
संचालक-शिवना प्रकाशन
मोबाइल-9806162184

प्रचार-प्रसार एवं समीक्षार्थ नवीनतम प्रकाशन ग़ज़ल संग्रह

एक पाठकीय प्रतिक्रिया : अभिनव इमरोज़

(लघुकथा विशेषांक) : अतिथि सम्पादक-श्री संदीप तोमर

सुनीता मिश्रा

जब बात लघुकथा की हो तो वह समय याद आता है, जब यह पत्र-पत्रिकाओं में फिलर की भूमिका निभाती थी और आज़ लघुकथा, साहित्य की मुख्य धारा से जुड़ी है। यह चमत्कार अचानक नहीं हुआ, इसके पीछे प्रतिष्ठित साहित्यकार, पुरोधा लघुकथाकार, सम्पादकों का अथक परिश्रम और निरत प्रयास रहा जो लघुकथा, पत्रिकाओं में विशेषांक, लघुकथा संग्रह, शोध-आलेख में स्थापित हो जन-प्रिय हो गई है।

पत्रिका अभिनव -इमरोज़ (लघुकथा विशेषांक)

संपादक-श्री देवेंद्र कुमार बहल

अतिथि सम्पादक- डॉ संदीप तोमर

इसमें कुल 32 लघुकथाएं चयनित हैं।

डॉ संदीप तोमर लघुकथा क्षेत्र में जाना-माना नाम हैं, इसमें दो राय नहीं कि साहित्य की अन्य विधाओं में भी संदीप जी ने अच्छा-खासा मुकाम हासिल कर लेखन-संसार में अपनी पहचान स्थापित की है। अभिनव इमरोज़ में संपादकीय पृष्ठ पर संदीप जी ने सूक्ष्मता से लघुकथा की बारीकियों का निरीक्षण कर, उनकी गहराइयों में जाकर टटोला, लघुकथा पर अपने दृष्टिकोण से संपादकीय पर उतारा जो निश्चय ही गहन अध्ययन का परिणाम है।

संपादकीय-पठन, मनन, मंथन योग्य है। सम्पादक लिखते हैं कि लघुकथा के विषय में नवीनता और प्रयोगधर्मिता महत्वपूर्ण स्थान रखती है। लघुकथा ही नहीं, कोई भी साहित्यिक विधा, प्रयोग और विषय-नवीनता से वंचित हो तो उस विधा का मार्ग प्रशस्त नहीं हो पाता है। प्रयोग और विषय नवीनता दोनों ही विधा संवर्धन के लिए संजीवनी का काम करते है। संदीप जी ने लघुकथा की अवधारणा को वह छोटी कहानी बताया, जिसमें बिजली की कौंध होती है। आपने-अपना एक प्यारा सा किस्सा शेयर किया है, जिससे आपके व्यक्तित्व की साफगोई, व्यवहार का सोंधापन और हल्की विनोदप्रियता की झलक मिलती है। "पहले जब मैं छोटी कहानियाँ लिखता था, उस समय लघुकथा के मानकों से अपरिचित होने के बावज़ूद मेरी वे कहानियाँ अच्छी लघुकथा बनी, लेकिन जब मानकों को पढ़ा, पहचाना, फिर जो लघुकथा लिखी वे उतनी मारक सिद्ध नहीं हो पायी।"

(कभी-कभी बंदिशें मार्ग में अवरोध उत्पन्न कर देतीं हैं)

वे लघुकथा में उपदेश को स्थान देते है, इस मानना के साथ कि उपदेश में उद्देश्य निहित होता है।

शीर्षक के बारे में आपकी राय में शीर्षक लघुकथा का विशिष्ट भाग है। शीर्षक आकर्षक हो, सामान्य से अलग हटकर हो, अर्थ-विशेष हो। प्रवेश द्वार की खूबसूरती ही शिल्प के सौंदर्य में इज़ाफ़ा करती है। शीर्षक ही कथ्य को कथानक का जामा पहनाता है।

लघुकथा में भूमिका, वातावरण से परे रख, संवाद, कथा-तत्व, चरित्र को प्रमुखता दी है। संपादकीय में लघुकथा के लिए दी टीप, नये लघुकथाकारों के लिए बहुत मायने रखती है जैसे-लघुकथा एक स्वतंत्र विधा है। इसमें कथानक सूक्ष्म होता है। ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीति, ज्वलंत विषय कथानक की रीढ़ होते हैं। पात्र संख्या कम होनी चाहिए। कल्पना और यथार्थ का मिश्रण लघुकथा में हो। शैली के सांकेतिकता और वेधकता, विशेष गुण हैं, प्रतीक, बिम्ब, मानवेतर, सभी कथानक, शैली को प्रभावशील बनाते हैं। लघुकथा के दो प्रकार की होती हैं-

1. दृष्टांत मूलक -कथ्य की अनुभूति दृष्टांत के द्वारा होती है।

2. अनुभव मूलक -कथ्य में यह अनुभव के द्वारा आ मार्मिक प्रभाव छोड़ती है।

संपादकीय के अतिरिक्त संदीप जी ने लघुकथा- रचना से संबंधित -'लघुकथा विधान और एक मनीषी का लेखन' आलेख लिखा है। उत्तर प्रदेश के लघुकथाकार मनु स्वामी के दो लघुकथा संकलनों का उल्लेख करते हुए लिखा कि यह अनूठे प्रयोगो का संकलन है। जो लेखक लघुकथा को अनुप्रयोग के रूप में देखते हैं, समाज, संस्कृति और राजनीति में गहरी पैठ रखते हैं, उन्हें यह संकलन बहुत प्रभवित करेगा। मनुस्वामी शब्दों के मितव्ययी लेखक हैं। उनकी लघुकथाओं में मंटो की पीड़ा, ख़लील ज़िब्रान की तरह बेबाकी, विषय चयन असगर वजाहत की तरह निर्मम है। मनुस्वामी की कलम राजनीति पर आग उगलती है। मिथक

पर उनकी लघुकथाएँ बिना पात्रों के नाम लिखे, धारदार कलम की तरह चलती हैं।

संदीप जी का यह कथन-मनुस्वामी के नाम के बिना लघुकथा का इतिहास लिखना लघुकथा-विधा के साथ नाइंसाफ़ी है" मनुस्वामी की लघुकथाओं के सशक्त वज़ूद की पुष्टि करता है।

प्रस्तुत अंक में कुल 32 लघुकथाएं हैं। संदीप जी द्वारा इन लघुकथाओं का विशिष्ट चयन है। सभी लघुकथाएं अपने आप में बतौर उपलब्धि पत्रिका में प्रतिष्ठित हैं। चंद्रेश कुमार छतलानी जी की लघुकथा 'जलेबियाँ गिरेंगी तो कुत्ते लड़ेंगे ही' एक बूढ़े पिता को अपनी वसीयत से पूर्व सतर्क करती सांकेतिक लघुकथा है। ज्योति स्पर्श की लघुकथा 'मर्द' दमदार शीर्षक के साथ, अंतिम पंक्ति बिजली के करंट सा झटका देती है। भावना भट्ट की 'ख़्वाब' स्त्री-विमर्श पर, टूटते सपनों के दंश झेलती हुई रचना है। अशोक भाटिया जी की चार लघुकथाएं नव- शिल्प-गठन कर इतिहास की पुनरावृति कर रहीं है, चारों लघुकथाएँ, एक-दूसरे से कड़ी जोड़ती हैं, यह नया प्रयोग है लघुकथा में। वीरेंद्र वीर मेहता जी 'साहित्य में रोबोट का प्रयोग कितना सार्थक' पर टिप्पणी उल्लेखनीय है–"भारतीय समाज में व्याप्त विसंगतियों के आधार पर रोबोट को लेकर लघुकथा में रचनाएँ नगन्य हैं।" बावज़ूद इसके कुछ लघुकथाकारों ने रोबोट को लेकर लघुकथा में सार्थक प्रयास किए हैं। 'बसेसर बाबू' अनिल शूर जी की लघुकथा, जीवनक्रम का विषय लेकर अपनी दस्तक दे रही है। बसेसर बाबू का जीवन के अंतिम पड़ाव पर अतीत का स्मरण करना, स्मरण में जीवन दर्शन छुपा है। एक वैधक लघुकथा। पूजा अग्निहोत्री की 'भ्रूण हत्या' पर सुगढ़ शिल्प के साथ, मारक लघुकथा। संदीप जी की लघुकथा पियक्कड़-स्त्री विमर्श। शराब के नशे में धुत्त दो पियक्कड़ दोस्त एक-दूसरे पर लानत भेजते हुए, अपनी कापुरुषता को पुरुषत्व घोषित करते हैं और फिर अपने कुकर्म पर आत्मिक ग्लानि से बह जाते हैं। सांकेतिक लघुकथा अनकहे, पुरुष मानसिकता चित्रित करती हुई।

शेष लघुकथाएं भी विभिन्न सामयिक विषयों पर विचारोत्तेजक भावों के साथ स्वयं को स्थापित किए हैं।

अभिनव इमरोज़ पत्रिका के लघुकथा विशेषांक का अतिथि संपादन, पद-कार्य संदीप जी ने पूरी निष्ठा और ईमानदारी से लघुकथा-विधा को समर्पित किया। आपके द्वारा लघुकथा प्रक्रिया पर प्रदत्त जानकारी स्तुत्य है। मनुस्वामी जी का लघुकथा विधान निःसन्देह लघुकथा के क्षेत्र में क्रांति वाहक सिद्ध होगा। अपने विचारों, गहन अध्ययन और अनुभव के माध्यम से संदीप जी लघुकथा की जो तस्वीर खींची है, वह लघुकथा को नया आयाम देने तथा पथ-प्रशस्त करने में सहायक होगी।

अतिथि संपादक संदीप तोमर जी को उनके विचाराधीन उद्देश्य के उज्जवल भविष्य की अनंत, असीम शुभकामनाएं।

–MIG-14, डिपो चौराहा, भोपाल, मप्र मो. 9425716678

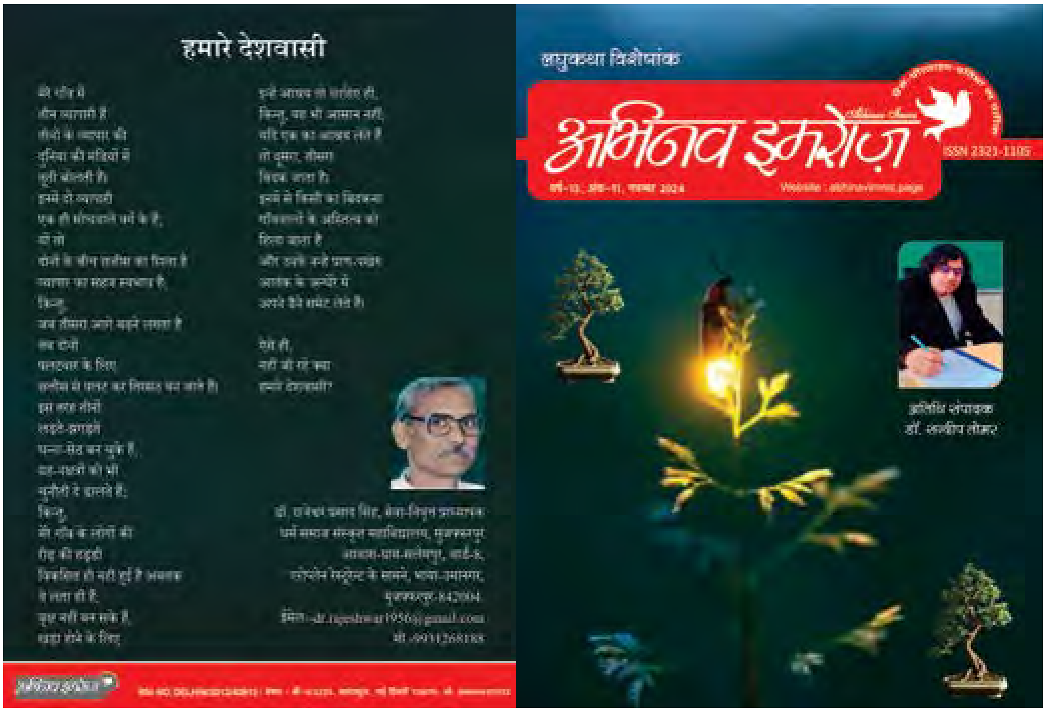

4 फरवरी, 2025 को पुस्तक मेला में भोजपुरी भाषा में सर्व भाषा ट्रस्ट से प्रकाशित डॉ. रेनू यादव की कहानी-संग्रह 'खुखड़ी' का लोकार्पण

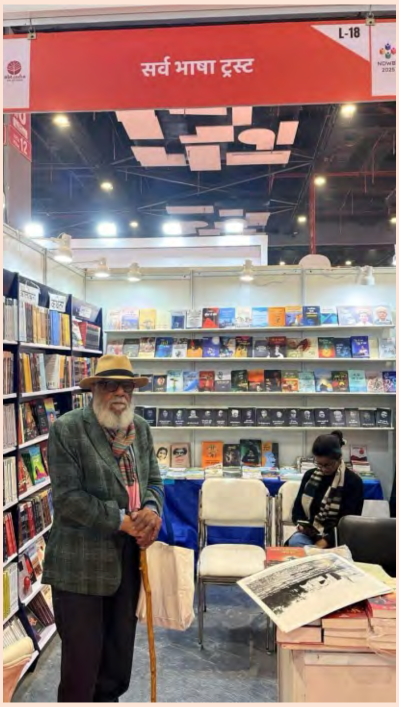

गगन मीडिया

भोजपुरी साहित्य को समृद्ध करती 'खुखड़ी' और 'भोजपुरी रामगीत'

विमोचन

- भोजपुरी रामगीत' का विमोचनः लोकसंस्कृति को संजोने का प्रयास

गगन मीडिया संवाददाता

गाजियाबाद। नई दिल्ली: विश्व पुस्तक मेले में सर्व भाषा प्रकाशन के स्टॉल पर दिनभर साहित्यप्रेमियों की भीड़ उमड़ती रही। दोपहर के सत्र में गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय की सहायक प्राध्यापिका एवं इफको श्रीलाल शुक्ल स्मृति युवा सम्मान प्राप्त लेखिका डॉ. रेणु यादव की भोजपुरी कहानियों का प्रथम संग्रह 'खुखड़ी' का लोकार्पण संपन्न हुआ।

इस अवसर पर प्रसिद्ध हिंदी-भोजपुरी साहित्यकार जयशंकर प्रसाद द्विवेदी ने कहा कि डॉ. रेणु यादव की कहानियां यथार्थ की भूमि पर रची गई हैं। ये समाज के ज्वलंत प्रश्नों को न केवल उजागर करती हैं, बल्कि उनका समाधान भी तलाशती हैं। सुप्रसिद्ध साहित्यकार एवं गीतकार मनोज भावुक ने उनकी रचनाओं की संवेदनशीलता को रेखांकित करते हुए कहा कि डॉ. रेणु यादव की कहानियां पाठकों के अंतर्मन तक पहुंचने की शक्ति रखती हैं। उन्होंने यह भी कहा कि भोजपुरी की महिला रचनाकारों में डॉ. रेणु यादव ने अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराई है।

वहीं, साहित्यप्रेमी शालिनी ने 'खुखड़ी' की रचनाओं में पितृसत्तात्मक व्यवस्था पर किए गए प्रहार को महत्वपूर्ण बताया। कार्यक्रम के दौरान केशव मोहन पांडेय ने डॉ. रेणु यादव की रचनात्मक यात्रा पर प्रकाश डालते हुए उनके साहित्यिक योगदान को रेखांकित किया।

सायं सत्र में वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय के भोजपुरी विभागाध्यक्ष प्रो. दिवाकर पांडेय की दो महत्वपूर्ण पुस्तकों 'भोजपुरी रामगीत' और 'चिंतन – अनुचिंतन' का लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर साहित्यकार जे.पी. द्विवेदी ने कहा कि भोजपुरी लोक के नायक राम पर आधारित गीतों का यह संग्रह अद्वितीय है और यह अकादमिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध होगा।

भोजपुरी शोधछात्र राजेश कुमार और यशवंत कुमार सिंह ने प्रो. दिवाकर पांडेय की पुस्तकों पर संक्षिप्त चर्चा करते हुए उनके विशिष्ट योगदान को रेखांकित किया। इस विशेष अवसर पर प्रो. दिवाकर पांडेय की सुपुत्री दीपिका पांडेय भी उपस्थित थीं, जिन्होंने अपने पिता की साहित्यिक यात्रा पर गर्व व्यक्त किया।

समारोह का संचालन मैथिली-भोजपुरी अकादमी के पूर्व सदस्य रवि प्रकाश सूरज और लेखिका आकृति विज्ञ अर्पण ने किया। कार्यक्रम में बड़ी संख्या में साहित्यप्रेमी, शोधार्थी एवं लेखक उपस्थित रहे, जिन्होंने भोजपुरी साहित्य के इस समृद्धिकरण को सराहा।

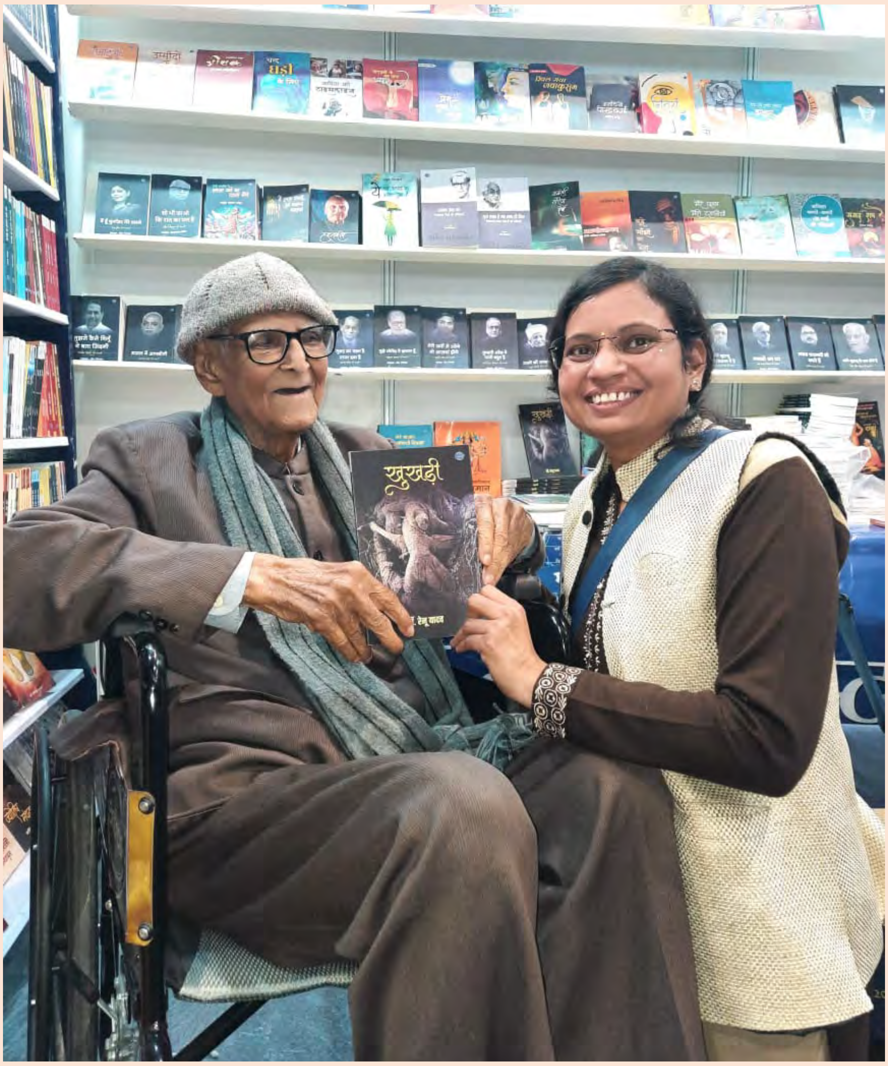

पुस्तक मेले में डॉ. रेनू यादव डॉ. रामदरश जी से आशीर्वाद लेते हुए

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक देवेन्द्र कुमार बहल द्वारा डेकोरपैक इंडिया प्रा. लि., 291डी, सेक्टर 6, आई.एम.टी., मानेसर, गुड़गाँव (हरियाणा) से मुद्रित, बी-3/3223, वसंतकुंज, नई दिल्ली 110070 से प्रकाशित किया । -संपादक : देवेन्द्र कुमार बहल

4 फरवरी, 2025 को पुस्तक मेला में भोजपुरी भाषा में सर्व भाषा ट्रस्ट से प्रकाशित डॉ. रेनू यादव की कहानी-संग्रह 'खुखड़ी' का लोकार्पण

बायें से डॉ. रेनू यादव तथा डॉ. अंजू

चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ में हिन्दी के फेकल्टीज़ ने साहित्यकारों की स्मृतियाँ बड़े सुंदर ढ़ंग से सँजो रखी हैं। शांत वातावरण और साहित्यकारों की जीवन्त मूर्तियाँ... पंडित मदन मोहन मालवीय हिन्दी साहित्यकार कुटीर का भ्रमण करते हुए डॉ. रेनू यादव...